http://www.jainkosh.org

सहजानंद शास्त्रमाला

मोक्ष – शास्त्र

भाग 13

रचयिता

अध्यात्मयोगी, न्यायतीर्थ, सिद्धान्तन्यायसाहित्यशास्त्री

पूज्य श्री क्षु० मनोहरजी वर्णी "सहजानन्द" महाराज

प्रकाशक

श्री सहजानंद शास्त्रमाला, मेरठ

एवं

श्री माणकचंद हीरालाल दिगम्बर जैन पारमार्थिक न्यास

गांधीनगर, इन्दौर

Online Version : 001

http://sahjanandvarnishastra.org/

आध्यात्म योगी पूज्य गुरुवर श्री मनोहर जी वर्णी
सहजानन्द जी महाराज

श्री सहजानन्द शास्त्र माला 13, से 14 भाग
१८५-ए, रणजीतपुरी, सदर - मेरठ

Report any errors at vikasnd@gmail.com

http://www.jainkosh.org

प्रकाशकीय

धर्मप्रेमी बन्धुओ !

श्रीमदुमास्वामी द्वारा प्रणीत 'मोक्ष शास्त्र' जैन धर्म व जिनशासन का प्राण है। प्रणेता ने छोटे छोटे सूत्रों में गागर में सागर भर दिया है। इस पर आठ दस शताब्दी पूर्व श्रीमद्भट्टाकलंकदेव, श्रीमद्विद्यानन्दि स्वामी जसे दिग्गजों ने टीकाएँ की हैं। परन्तु टीकाएँ संस्कृत में होने के कारण जनसामान्य के उपयोग में नहीं आतीं।

यह समाज के परमहित व उपकार की बात है कि पूज्य गुरुवर्य्य श्री सहजानन्द जी महाराज ने इस ग्रन्थ पर प्रवचन किये हैं। धर्म के मर्म को महाराज श्री ने किस प्रकार उजागर किया है, यह तो ग्रन्थ के अध्ययन से ही पता लगता है।

जिज्ञासु बन्धुओं से निवेदन है कि इस प्रवचन में संजोये रत्नों का लाभ उठायें जिससे मोक्ष मार्ग में प्रगति हो और सत्य सहज आनन्द प्राप्त हो।

मंगलाकांक्षी
मंत्री
सहजानन्द शास्त्रमाला
मेरठ

Version 1

http://sahjanandvarnishastra.org/

ॐ

मोक्ष शास्त्र प्रवचन

त्रयोदश भाग

प्रवक्ता—अध्यात्मयोगी न्याय तीर्थ पूज्य श्री १०५ क्षु०, मनोहर जी वर्णी 'सहजानन्द' महाराज

वर्तमान प्रसंग से पूर्व कथित आवश्यक जीवतत्वविषयक घटनाओं का स्मरण—इस ग्रन्थ का नाम तत्त्वार्थ सूत्र इस कारण सही है कि इसमें तत्त्व सहित वस्तु स्वरूप सहित पदार्थों का वर्णन किया गया है और इसका दूसरा नाम है मोक्षशास्त्र। यह भी सार्थक नाम है। संसार के जीवों को संसार के संकटों से छूटने का इसमें उपदेश दिया गया है इसलिए मोक्षशास्त्र का नाम सार्थक है तब ही तो इस ग्रन्थ में सबसे पहले यह ही कहा गया कि सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान, सम्यक् चारित्र मोक्ष का मार्ग है। न मोक्ष की बात कही और न संसार संकटों की बात कही और न यह कहा कि तुम कैसे रोगी हो, क्या तुमको दु:ख है, कैसे भ्रमते आये हो ! यह कुछ न कहा, एकदम मोक्ष के उपाय की बात कह दिया। तो ऋषिजन बड़े करुणावन्त होते हैं। वे पहले संसार भ्रमण की बात बताकर इस जीव को हैरान नहीं करना चाहते। ये घबड़ा न जाएं, परेशान न हो जायें। और, मोक्ष की बात पहले इसलिए नहीं की कि सब जीव मोक्ष मानते हैं, मोक्ष चाहते हैं, दु:खों से छूटना चाहते हैं। तो एकदम मोक्ष के उपाय की बात कही। उसमें बताया है कि तत्त्वार्थ का श्रद्धान करना सम्यक् दर्शन है और वे तत्त्वार्थ हैं सात। जीव, अजीव, आस्रव, बंध, संवर, निर्जरा और मोक्ष। वैसे तो बिल्कुल सीधी सी बात है, जीव और अजीव ये अलग-अलग रहे आते तो बहुत बढ़िया बात थी मगर ऐसा तो नहीं है, अनादि से जीव और अजीव दोनों एक जगह संयोग से चले आ रहे हैं, सम्बन्ध बने आ रहे हैं। तब देखो जीव में अजीव का आना आश्रव है। अजीव मायने कर्म और जीव मायने जीव। जीव में अजीव का आना आश्रव, जीव में अजीव बंध जाए बंध, जीव में अजीव न आये संवर। आये हुये अजीव जीव से निकल जाये—निर्जरा और पूरी तरह से निकल जायें तो मोक्ष। किसका मोक्ष हो गया ? जीव का भी हो गया और अजीव का भी। कर्म छूट गये तब वे भी अपनी असली स्थिति में आ गए, अकर्मरूप हो गए। उनमें ज्ञान नहीं, लेकिन परेशानी तो कर्मों को बहुत है। जीव से भी ज्यादह परेशानी है कर्मों को। जीव को क्या ? झलक रहा। उपयोग लग गया पर वहाँ तो देखो सारा अनुभाग पड़ा है, क्रोध का, मान का, माया का, लोभ का, स्थिति बंधी पड़ी है, उनमें ही प्रकृति पड़ी भई है। तो सारा यह कर्म का छायारूप है। वह फैक्टरी तो कर्मों में ही चल रही है हर तरह से। तो जब मोक्ष हुआ तो कर्मों का भी मोक्ष हुआ, जीव का भी मोक्ष हुआ। पर कर्मों को शरम नहीं। मोक्ष के बाद फिर ज्यों के त्यों हो जायेंगे, और के साथ लग बैठेंगे। जीव जरा पानीदार तत्त्व है। तो एक बार छूटने के बाद फिर संसार अवस्था में नहीं आता। तो इन ७ तत्त्वों में सबसे प्रथम जीव तत्त्व का वर्णन किया है। इस दूसरे अध्याय में जीव के बारे में योग और उपयोगकृत बहुत वर्णन हो चुका।

Report any errors at vikasnd@gmail.com

http://www.jainkosh.org

जीव के जिज्ञासित स्थानों के विवरण में अधोलोक के विवरण का प्रारम्भ—अब इतना वर्णन सुनने के बाद जिज्ञासा होती है कि यह जीव रहता किस-किस जगह है। किसी भी मनुष्य से परिचय करना है तो पहले तो यह कहते हैं कि आप कौन हैं फिर कहते हैं कि आप कहाँ रहते हैं ये दो प्रश्न इस ढंग से हुआ करते हैं। सबसे पहले यह कोई नहीं पूछता कि आप कहाँ रहते हैं। थोड़ा यह परिचय पाते कि आप कौन हैं ? फिर कहते हैं कि आप कहाँ रहते हैं ? बस यही पद्धति यहाँ आयी है, दूसरे अध्याय में कहा गया कि जीव कौन है ? तीसरे अध्याय में पूछा जा रहा है कि यह जीव रहता कहाँ है ? तो यह जीव रहता कहाँ है ? लोक में, जिसके कि तीन विभाग हैं—(१) अधोलोक, (२) मध्यलोक और, (३) उर्ध्वलोक इन तीनों लोकों में जीव रहता है। तो अब जीवों के स्थान का वर्णन करना है तो अटपट वर्णन ठीक नहीं है। एक सिलसिले से वर्णन लें। तो बोलो सिलसिला कहाँ से लायेंगे ? क्या मध्य लोक से ? उसके बाद फिर किसका वर्णन करेंगे ? क्या उर्ध्व लोक का ? उसका वर्णन करने के बाद अधोलोक का वर्णन करने के लिये बड़ी लम्बी खींच करनी पड़ेगी। वह निकट न रहा वर्णन इसलिये भाई अधोलोक का वर्णन करो। अधो-लोक का वर्णन किया, मध्यलोक का किया फिर उर्ध्व लोक का किया। ऐसे क्रम से वर्णन करते हैं तो सबसे पहले अधोलोक का वर्णन किया जाएगा और अधोलोक का वर्णन करने का एक रहस्य यह है कि वह तो पहले एकदम जीवों को सान्त्वना देने के लिये, आलम्बन देने के लिए एकदम मोक्ष के उपायों का वर्णन किया, लेकिन थोड़ा सिलसिले में लेने के बाद अब जीव को सभी तरह की बात बताना चाहिये ना। तो सबसे पहले नरकों की बात बतायेंगे ताकि पापों से भय हो, वैराग्य में यह आगे बढ़े और यह अपना कल्याण करे। इस कारण सबसे पहले अधोलोक का वर्णन किया जा रहा है। इस अध्याय में सर्वप्रथम अधोलोक की भूमियाँ बताते हैं।

रत्नशर्कराबालुका पङ्कधूमतमोमहातमः प्रभा भूमयो।
घनाम्बुवाताकाशप्रतिष्ठाः सप्ताधोधः ॥३॥१॥

अधोलोक की सात भूमियों के अवस्थान का वर्णन—सूत्र का अर्थ है—रत्नप्रभा, शर्करा प्रभा, बालुका प्रभा, पंक प्रभा, धूम प्रभा, तमः प्रभा और महातमः प्रभा। इन ७ नामों की भूमियाँ एक के नीचे एक हैं और वे सब भूमियाँ घनोदधि वातवलय के आधार पर हैं। घनोदधि वातवलय, घन वातवलय के आधार पर है, घन वातवलय, तनु वातवलय के आधार पर है, और तनु वातवलय आकाश के आधार पर है। आकाश को अन्य आधार की आवश्यकता नहीं। कल्याण चाहने वाले पुरुषों को तत्त्व ज्ञान का मार्ग एक मुखी नहीं होता। उनको साधारणतया बहुमुखी ज्ञान हो तब ही उनका वैराग्य टिक सकता है। कोई कहे कि खाली वस्तु के द्रव्य गुण पर्याय की खूब चर्चा कर लें और उसी का खूब ज्ञान कर लें तो करते जायें, सम्भव है कि वह तोतारटंत की बात बन जाएगी, अथवा जैसे बर्तन बनाने वाले के कारखाने में कोई कबूतर रह रहा वहीं बैठा रहता है खूंटे पर और वहां आवाज कितनी आ रही है। बर्तनों की ठुकठुककी बहुत आवाज आती है, मगर अचरज है कि वह कबूतर उन आवाजों से घबड़ाता नहीं, और खूंटे पर बैठा रहता है जब कि चिड़िया, कबूतर आदि जरा सी ताली ही बजा दो तो उड़कर भाग जाते हैं। क्यों नहीं भाग रहा वह कबूतर, बर्तन की ठन-ठन की आवाज होने पर भी। उसको अभ्यास बन गया उस आवाज के सुनने का। तो इस तरह एक-मुखी एक संकोच दायरे का कोई ढंग का तत्त्व ज्ञान बनाये तो उससे स्पष्ट बात नहीं होती। थोड़ा दुनिया का भी ज्ञान चाहिए। लोक कितना बड़ा है। किस-किस जगह है, जीव कहाँ-कहाँ रहताहै, जगह

Version 1

http://sahjanandvarnishastra.org/

का भी ज्ञान हो, उनके देहों का भी ज्ञान हो, तो जीव के अस्तित्त्व के बारे में श्रद्धा में ही दृढ़ता बढ़ती है नहीं तो ऐसा लगता कि जैसा औरों ने ब्रह्म कह दिया, एक ब्रह्म है जगत में और कुछ नहीं है। वह कूटस्थ है अपरिणामी है, पर समझ में क्या आया, हाथ क्या लगा ? तो कोई कुछ नहीं कह सकता। तो एकमुखी याने किसी एक विषय का जो ज्ञान है वह स्पष्ट ज्ञान नहीं होता। तो हमें सब कुछ जानना चाहिये कि जीव कहाँ रहते हैं, कैसे रहते हैं, क्या उनका ढंग है। जीवों का विशेष परिचय पाने के लिये आचार्य सन्तों ने मार्गणा और गुण स्थानों का आधार बताया है। सबसे सुन्दर उपाय है जीवों के बारे में सब तरह का ज्ञान पाने के लिये। इससे बढ़िया और कोई उपाय नहीं। परखते जाओ सब मार्गणा और गुणस्थानों को जानो। तो उन्हीं में से एक विवरण है यह सब को बताया जा रहा है।

सात भूमियों की रचना का प्रकार—सर्वप्रथम कहाँ-कहाँ रहते हैं जीव, उनमें से अधोलोक का वर्णन यहां किया जा रहा है। सूत्र में जितने शब्द दिये हैं ये सब आवश्यक शब्द हैं। ७ नाम गिनाये ही थे—रत्न प्रभा, शर्करा प्रभा आदिक। और ये सब सार्थक नाम हैं। जैसे पहले नरक में कितना उजेला है। बहुत तेज तो नहीं, पर इतना प्रकाश है जैसे कि कुछ रत्नों का प्रकाश होता है। दूसरे नरक में उतनी आभा है जैसे शक्कर की। तो कुछ प्रकाश तो नहीं मगर कुछ सफेद जैसा होता। तीसरे नरक में रेत जैसे रंग का प्रकाश है, चौथे नरक में कीचड़ जैसी प्रभा है। ५वें में धुआं जितना। प्रभा का अर्थ प्रकाश न लेना किन्तु जो जिसमें है वह लेना और ६टे नरक में अन्धकार जैसा और ७ वे नरक में महान् अन्धकार जैसा। वहाँ रहते हैं ये नारकी, तो पहले तो स्थान से ही समझ जायेंगे कि कितना दु:खप्रद स्थान है। और ये सातों नरक क्रमश: एक के बाद एक नीचे है, पहले रत्न प्रभा, दूसरा शर्करा प्रभा आदि। ये भूमियां हैं, ठोस और उन ठोस भूमियों के बीच-बीच नारकियों के रहने के बिल के ढंग के स्थान हैं। जैसे कि पृथ्वी में चूहे के बिल होते हैं तो चूहे के बिल फिर भी अच्छे हैं, उनके ऊपर से रास्ता तो है पर इन बिलों का रास्ता किसी जगह से नहीं है, और इसको इस दृष्टान्त से समझ सकते हैं कि जैसे कोई एक फुट का लम्बा चौड़ा मोटा काठ हो और उसके बीच में सैंकड़ों छेद पड़े हों और ऊपर से किसी भी तरफ बिल्कुल नहीं मालूम पड़ते, यह अन्दाज भी नहीं हो पाता कि इसके अन्दर छेद हैं, ऐसी लकड़ी बाजार में बहुत मिल सकती है, तो ऐसे ही उन जमीनों में भीतर ऐसी पोल है कि जिनमें कोई बाहर के लिये स्थान नहीं कि कहीं उसका मुख हो, ऐसे बिलों में गे नारकी जीव रहते हैं। सो एक भूमि है, उसके बीच में नारकी हैं और उसके नीचे कुछ नहीं, आकाश है बहुत सा उसके नीचे फिर एक भूमि है उसमें नारकी रहते, उसमें नीचे आकाश, फिर भूमि है। तो कोई शब्द को पकड़ने वाला यह शंका करे कि तुम तो कह रहे कि सातों नरक एक के नीचे नीचे हैं, मगर बीच में तो आकाश का अन्तराल आ गया, तो वह एकदम नीचे नीचे कैसे कहलाया ? तो भाई नीचे-नीचे ही कहलाता है, आकाश की कोई विवक्षा नहीं है, या उस अन्तराल को भी मान् लो, पहले नरक के नीचे पहले दूसरे के अन्तराल वाला आकाश है। मतलब ये सब नरक एक के नीचे एक चले गए हैं। तो ये सातों भूमियाँ अलग-अलग हैं, जुड़ी-जुड़ी नहीं। ये भूमियाँ तीन प्रकार की वायु के आधार पर हैं सबसे पहले घनोदधि वातवलय याने किसी पानी का मिक्सचर वाला पवन अधिक मोटा होता है उसके बाद घन वातवलय जहाँ पानी का मिश्रण नहीं किन्तु घन वायु है। उसके बाद तनु वातवलय उसके बाद आकाश ही आकाश। भूमि का आधार यहाँ वायु है। जिस जमीन पर हम आप चलते-फिरते

Report any errors at vikasnd@gmail.com

हैं यह रत्न प्रभा भूमि है मगर नरक यहाँ ऊपर नहीं है। रत्नप्रभा भूमि के तीन हिस्से हैं भीतर। हम आप तो ऊपर रहते हैं, तो ऊपर के दो भागों में तो खोंटे देव रहते हैं भवनवासी और व्यन्तर और शेष के तीसरे भाग में नारकी रहते हैं तो यह भूमि वायु के आधार पर स्थिर है।

भूमियों के आधार व स्थिरत्व के विषय में कुछ आशंकाओं का दिग्दर्शन—देखिए वैज्ञानिक लोगों के सामने एक शंका आज के समय में ही नहीं बल्कि अब से हजारों वर्ष पहले की उठी हुई है कि यह जमीन गोल है और ऊपर नीचे सब तरफ से घूमती रहती है और नक्षत्र सब स्थिर हैं। यह चर्चा बहुत पहले समय से चल रही है। यह तो एक ज्ञान की बात है। ज्ञानीजन पहले भी होते थे पहले भी चर्चा चलती थी। तो एक शंकालु यहाँ एक बात कहता है कि जमीन तो गोल है और वह ऊपर नीचे इस तरह घूमती रहती है और ये नक्षत्र ये मेरूकी प्रदक्षिणा रूप में स्थित हैं जहाँ के तहां। बस यह भूमि घूमती है और उसमें कभी नक्षत्र दिखते, कभी नहीं दिखते, इस तरह चलता रहता है। तो फिर यह बात कहना कि ये भूमियाँ सब स्थिर हैं यह बात तो सही न बनी। एक यह आशंका वैज्ञानिकों की है। उसका समाधान देंगे। पर उस समाधान से पहले थोड़ा और प्रकार के लोगों की भी बात सुनो। कोई लोग कहते हैं कि यह जमीन तो कछुवा की पीठ पर सधी है, ऐसे कुछ धार्मिक दार्शनिक हैं जो यह कहते हैं कि कूर्म याने कछुवा के ऊपर भूमि सधी भई है। कुछ लोग उसमें आशंका रखते हैं कि यह भूमि वायु के आधार पर कैसे है और है तो यह वायु किसके आधार पर है। यह इसके आधार पर है, तनु वातवलय आकाश के आधार पर है तो आकाश का आधार बताओ। जब आधार बताने में धुन लग गयी तो बताओ किस आधार पर आकाश टिका है? ऐसी कुछ लोग शंका रख सकते। पर इन सब शंकाओं का जरा प्रतिलोम (उल्टा) पद्धति से समाधान सुनो।

वायुओं में भूमि की आधारता सिद्ध करते हुए तृतीय आशंका का समाधान—अन्त में कौन सी शंका रखी कि कैसे यह भूमि इस हवा के आधार पर है, यह हवा इस हवा के आधार पर है। वह तनु वातवलय के आधार पर है तो इसके लिये यह अनुमान सिद्ध करना है। पहले तो यह देखो कि आकाश किसी के आधार पर नहीं है क्योंकि वह व्यापक द्रव्य है। आकाश अपने आपके आधार पर है व्यापक द्रव्य होने से। जो अपने आधार पर नहीं है वह व्यापक द्रव्य न मिलेगा। जैसे यह तख्त, यह घड़ी, यह दरी, हम आप लोग ये सब छोटे-छोटे पदार्थ हैं, व्यापक नहीं हैं इसलिये इनका आधार चाहिए। जो सर्व व्यापक पदार्थ है उसको आधार की जरूरत नहीं। आकाश से अधिक सर्वव्यापक कोई और पदार्थ है क्या? है कोई आकाश से बड़ा लम्बा चौड़ा क्या क्षेत्र दृष्टि से? तो आकाश से बड़ा कोई पदार्थ नहीं इसलिए आकाश निराधार स्वाधार है, उसको किसी अन्य के आधार की जरूरत नहीं। जरा इस प्रसंग में एक बात सुनो—जो प्रश्न किया गया कि आकाश से बड़ा कुछ नहीं तो हम बतायें कि है कोई आकाश से बड़ा। आप लोग सोचो कौन सी चीज है जो आकाश से भी बड़ी हो? वह चीज है ज्ञान। ज्ञान व्यापक है। निश्चयनय से तो व्यापक नहीं, क्योंकि ज्ञान भी जीव के प्रदेशों में ही रहता है, अगर विषय की दृष्टि देखें तो ज्ञान ने सब जीव द्रव्यों को जाना, पुद्गल को, धर्म, अधर्म, आकाश, काल को जाना और फिर यदि इतनी चीजें और और भी अनगिनतें होतीं तो उन्हें भी जानता। इतना व्यापक है ज्ञान का स्वरूप। और देखिये एक युक्ति से भी सोचो—एक बात बतलाओ कि सूक्ष्म स्थूल में समायेगा कि स्थूल में सूक्ष्म? तो लोग तो प्रायः यही उत्तर देंगे कि स्थूल में सूक्ष्म समा जाएगा, पर बात इसके विपरीत इस समय कही जा रही है। सूक्ष्म में स्थूल समाया

http://sahjanandvarnishastra.org/

करता है। इसके लिये कुछ उदाहरण ले लो। देखो—पृथ्वी स्थूल है और जल सूक्ष्म है, पर जल में पृथ्वी समायी हुई है। यह बात तो सभी लोग मानते हैं। जल का क्षेत्र ज्यादह है और सिद्धान्त के अनुसार भी मध्य लोक में जल का क्षेत्र ज्यादह है। एक ही स्वयंभू रमण समुद्र इतना बड़ा है कि असंख्याते द्वीप समुद्र मिलकर भी उतना बड़ा नहीं है, तो देखो जल सूक्ष्म है, पृथ्वी स्थूल है, तो जल में पृथ्वी समायी हुई है। अब जल और हवा की बात देखो—जल स्थूल है हवा सूक्ष्म है, तो हवा में जल समाया है जल के क्षेत्र से हवा का क्षेत्र ज्यादह व्यापक है। अब हवा और आकाश में में देखो—हवा से आकाश सूक्ष्म है तो आकाश में हवा समायी हुई है। और आकाश से सूक्ष्म है ज्ञान, तब ही तो ज्ञान में आकाश समाया है, और दुनिया की सारी चीजें समायी हैं तथा इनसे असंख्यात गुणे ये और होते तो वे भी समा जाते। तो एक आत्मधुनिया की ओर से जरा चर्चा बीच में छेड़ दी। प्रसंग तो यहाँ यह है कि आकाश किसी अन्य के आधार पर नहीं है। आकाश आधार है और तनु वातवलय आधेय है। कोई चीज अगर हवा के बल पर टिकी है तो उसके निकट मोटी हवा होगी। उसके बाद कुछ कम हवा होगी और अन्त में बिल्कुल कम हवा होगी। यह तो विधि होती है। तो ये भूमियाँ घनोदधि वातवलय के आधार पर है। घनोदधि वातवलय पर टिका है तनु वातवलय पर तनु वातवलय आकाश में टिका हुआ है।

कछुआ आदि के आधार का निराकरण करते हुए द्वितीय आशंका का समाधान देकर स्थानों के बारे में कुछ व्यावहारिक छटनी की चर्चा—यदि ऐसा माना जाए कि यह जमीन कछुवे पर टिकी है तो वही प्रश्न आयेगा कि फिर वह कछुआ किस पर टिका है। दूसरी बात—यह बात असम्भव है कि जमीन कछुआ पर टिकी है जमीन कछुआ पर नहीं टिकी है। जैसे कि हम अन्य कछुओं को देखते हैं उन पर क्या टिक रहा है? यह भूमि है और प्रकृत्य ऐसी ही रचना है कि जो वायु के आधार पर टिकी हुई है, यह बतलायी जा रही जीव के घरों की बात। जीव के घर कहाँ-कहाँ हैं। कहाँ-कहाँ रहते हैं ये जीव। अब कोई बढ़िया घर नहीं है, तो वहाँ मत ठहरो। जो घर बढ़िया है वहां ठहर जाओ। यहाँ भी तो जब किसी के कई हवेली होती हैं तो वह पुराने टाइप की बनी हुई हवेली में, जिसमें कि न तो खुली जगह है, न प्रकाश पहुँचता, न हवा, तो ऐसी जगह में ठहरना नहीं पसन्द करते। जो अच्छी हवेली होती है उसमें ठहरना पसन्द करते। तो ऐसे ही इस जीव के जन्म स्थानों को जान लो, अब जो स्थान अच्छे हों, जिनमें कोई घबड़ाहट न हो उनमें पहुँचने का प्रयत्न करो। देखो सबसे बढ़िया धाम है सिद्ध क्षेत्र। वहाँ पहुँचकर जीव को किसी तरह की घबड़ाहट नहीं, मगर योग्यता अपनी अपनी है। सिद्ध क्षेत्र में निगोदिया जीव भी रहते हैं, उनको उतनी घबड़ाहट है जितनी कि यहां के निगोदिया जीवों को। कुछ ऐसा नहीं है कि सिद्ध क्षेत्र में रहने से उनकी आकुलता में फर्क हो, और यहीं सिद्ध भगवान के आत्मा बिराजें हैं जो कि ज्ञानपुञ्ज हैं। उन्हीं आत्माओं के स्थान में निगोदिया भी घूम रहे, आधार नहीं हैं वे मगर जगह तो है। कर्म सहित जीव निगोदिया एक श्वांस में १८ बार जन्म-मरण करने वाले सिद्ध क्षेत्र में भी पड़े हुए हैं, मगर सत्ता न्यारी-न्यारी है, जीव न्यारे-न्यारे हैं। तो इस वर्णन को सुनकर फिर घर ढूँढने की छटनी की भी अक्ल गायब हो जाती है। क्यों छटनी करें कि हमको जगत में किस जगह रहना है सिद्ध क्षेत्र में भी निगोदिया जीव दुःखी हैं, नरकों में भी जीव दुःखी हैं तो लोक में जगह की छटनी तो छोड़ दो। छटनी करो अपने आपको योग्यता की। अपने आपके स्वरूप की। जिस स्वरूप को निरखकर हम

Report any errors at vikasnd@gmail.com

http://www.jainkosh.org

अपने आप में शान्त रहेंगे, केवली बनेंगे, अनन्त आनन्द के धाम में रहेंगे, उस ही की छटनी करें। यह सारा लोक सब वायु के आधार पर है, ऐसी ही प्राकृतिक रचना है, घनवायु है जहाँ कभी फर्क नहीं पड़ सकता। तो जितनी वातवलय के आधार पर ये भूमियाँ टिकी हैं ये धाम नरक एक के नीचे दूसरा, दूसरे के नीचे तीसरा, इस तरह से एक के नीचे एक चले गए हैं। अब कैसी-कैसी उनकी रचना है, कैसा विस्तार है, कैसे बिल हैं, अंगुल-२ की बात बतायी जायेगी। जहाँ लोक का वर्णन है, जिनेन्द्र भगवान की वाणी में, स्वर्गों का, पर्वतों का, एक-एक अंगुल का और कोई-कोई तो एक अंगुल भी पूरा नहीं है तो उसके बारे में बता दिया। इतना बड़ा ज्ञान उन सन्तों का निर्मल था कि सब तरह से सूक्ष्म से सूक्ष्म बातें भी दिखाया है।

प्रकृत विषय का स्मरण—जीव का स्वरूप जाने बिना इस जीव को प्रकाश कैसे मिलेगा। हमें किस तरह रहना चाहिये, क्या चिन्तन करना चाहिये, यह मार्ग तत्त्व ज्ञान मिलने पर ही होता है। इसी सिलसिले में जीव के बारे में दूसरे अध्याय में बहुत कुछ वर्णन किया है मोक्षशास्त्र में, कि जीव के कैसे-कैसे परिणाम हैं, क्या लक्षण हैं, कैसी क्रिया है, कैसा शरीर है, कैसी उनकी आयु है, सभी बातों का विवरण बताया, अब वे जीव रहते कहाँ हैं, ऐसी जिज्ञासा होने पर एक लोक का स्वरूप बताया जा रहा है कि दुनिया क्या है ? कितनी बड़ी है। तो सारा लोक तीन भागों में बंटा हुआ है—(१) अधोलोक, (२) मध्य लोक और (३) उर्ध्व लोक। अधोलोक मेरु पर्वत की जड़ से नीचे जितना भी स्थान है वह सब अधोलोक कहलाता है। अधोलोक में ७ पृथ्वियाँ हैं, जिनमें नारकी जीव रहते हैं। इसी को नरक कहते हैं। तो वे भूमियाँ किस बात पर स्थिर हैं, उनको कौन रोके हुये है ? यह भूमियाँ जहाँ की तहाँ अवस्थित हैं। तो बताया गया कि भूमियों के सब तरफ एक ऊपरी भाग छोड़कर याने ५ तरफ, चारों दिशाओं में और एक नीचे, तीन प्रकार की वायु है। जिन वायुवों पर वे भूमियाँ स्थिर हैं। इस विषय पर एक शंका यह हुई थी कि हम तो जानते हैं कि पृथ्वी गेंद की तरह गोल है और वह ऊपर नीचे घूमती रहती है। नक्षत्र मण्डल जहाँ का तहाँ स्थिर है, इसमें तो दर्पण के आकार की तरह, थाली के आकार की तरह पृथ्वी नहीं मालूम होती। उसके समाधान में आज कुछ विचार करना।

भूगोल व भूभ्रम की एक आशंका—शंकाकार यह मानता है कि भूमि के चारों तरफ जो वायु है उस वायु की प्रेरणा से यह जमीन ऊँचे-नीचे घूमती रहती है। भूगोल वालों का एक इस प्रकार का प्रस्ताव है कि जमीन गेंद की तरह गोल है और उसके चारों तरफ जो वायु है वह स्वयं बहने वाली है तो उसके सहारे यह पृथ्वी भी ऊपर नीचे घूमती रहती है। ऐसा शंकाकार का कहना है, मगर इसका ठीक प्रमाण नहीं दिया जा सकता। शास्त्र और पुस्तक की बात तो यह है कि सब कोई अपने-अपने विचार के अनुसार लिख सकता है, जब उसके साथ-साथ कोई दूसरा प्रमाण भी ठीक बैठता हो तो पुस्तकों को भी प्रमाण माना जा सकता है। पर इस बात को सिद्ध करने में कोई प्रमाण नहीं है कि यह जमीन गोल है गेंद की तरह और उसके चारों तरफ हवा है, वह इस भूमि में ऊपर नीचे घूमती रहती है। शंकाकार कहता है कि है तो हमारे पास प्रमाण। देखो एक अनुमान है, पत्ते ऊपर नीचे घूमते रहते हैं और उसका कारण है हवा। देखो जो पुरुष की चेष्टा के बिना घूमता हो तो समझना चाहिये कि उसमें कारण हवा है जैसे यहाँ-वहाँ के पत्ते जब डोलते रहते हैं और कोई पुरुष उन्हें फेंक नहीं रहा तो सिद्ध हो रहा ना कि वायु हिला रही इसलिए पत्ते उड़

Version 1

http://sahjanandvarnishastra.org/

रहे। तो पुरुष की चेष्टा के बिना अगर कोई चीज घूमती है तो उसका कारण वायु ही होता है और इस तरह यह पृथ्वी यह पुरुष की चेष्टा बिना घूमती रहती है। कोई पुरुष इस पृथ्वी को घुमा रहा हो ऐसा नहीं है। तो पुरुष की चेष्टा के बिना यह पृथ्वी घूम रही है तो इसमें कारण हवा होना चाहिये, ऐसा शंकाकार अपनी बात रख रहा है। और बता रहा है कि हेतु बिल्कुल सही है कि इस जमीन को घुमाने में कोई न ईश्वर कारण है न पुरुष कारण है और घूमती रहती है तो इससे सिद्ध होता कि इसके चारों तरफ ऐसी हवा चलती है कि उससे यह पृथ्वी घूमती है। शंकाकार ही कहे जा रहा है कि यह भू गोल है गेंद की तरह और यह ऊपर नीचे घूमता है तब ही तो कभी चन्द्र दिख गया, सूर्य दिख गया, तारे दिख गये, कभी नहीं दिख रहे तो पृथ्वी घूम-घूमकर जिसके सामने हुई वही चीज दिख जाती है। दूसरी बात जब सूर्य या चन्द्रमा का उदय होता तो ऐसा लगता है कि जमीन से चिपककर उदय हो रहा हो, जब अस्त होता तो ऐसा लगता कि जमीन के पास से जा रहा, यह बात तब ही हो सकेगी जब कि गेंद की तरह पृथ्वी गोल हो जाये। यह सब बात शंकाकार की ओर से कह रहे हैं, शंकाकार अपनी बात सिद्ध करने में कितनी दलील दे सकता है। उसका कहना है कि सूर्य, चन्द्र तो स्थिर हैं और यह भूमि डोलती है, गोल गोल फिरती है।

भूभ्रमण का भ्रम तथा बाधक घटनायें बताते हुए भूभ्रमण की शंका का समाधान—अब उक्त शंका के समाधान में सोचो कि जो-जो बात उसने कहा, देखिये वह सब भ्रम हो गया कि जमीन चलती है और चन्द्र नक्षत्र सूर्य ये सब स्थिर हैं। देखो गणित की बात तो यह है कि अगर ऐसा मानते कोई कि भूमि चलती है, नक्षत्र स्थिर हैं तो वह ही गणित लग जाएगा जो ऐसा माने कोई कि नक्षत्र मण्डल चल रहे हैं और भूमि ज्यों की त्यों स्थिर है ऐसा मानने पर भी वही गणित लग बैठेगा रात दिन का होना सूर्यग्रहण, चन्द्रग्रहण का होना आदि, इसलिए उस गणित के कारण यह नहीं माना जाता है कि भूमि चलती है। अब और विचार करना होगा, देखो पहली बात—भूमि अगर चलती है तो ऊपर से कोई चीज फेंकी जाए तो फिर उस चीज को उसी जगह नहीं गिरना चाहिये। वह तो और ही जगह गिरना चाहिये क्योंकि बीच में कुछ समय लगेगा, पर ऐसा तो नहीं देखा जाता। कितनी ही ऊपर से चीज गिराई जाए, पृथ्वी भाग के ऊपर से गिरायी जाए तो वह उसी जगह गिरती है। चाहे पानी गिरे, चाहे कोई लोहा का गोला गिरे, गिरेगा उसी जगह। अगर भूमि चलती है तब तो वह चीज दूसरी जगह गिर जाना चाहिए। इसका उत्तर ये वैज्ञानिक यह दे सकते हैं कि वह भूमि तो प्रत्येक वस्तु को अपनी ओर खींचती है। जो लोग पृथ्वी की आकर्षण शक्ति के विषय में कहते हैं उनका कोरा भ्रम है, कैसे कि वस्तु को जमीन नहीं खींचती किन्तु वस्तु अगर घन है तो उसकी प्रकृति है कि वह नीचे गिरती है। याने अधः पात शक्ति है पदार्थ में, तो पदार्थ नीचे की ओर गिरता है, जमीन खींचती हो यह बात नहीं। बहुत निष्पक्ष रीति से विचार करें तो सब बात समझ में आयेगी। जो गुरु चीज है उसका नीचे की ओर गिरने का स्वभाव है और जमीन स्थिर है तो जब वह चीज नीचे गिरती है तो अधः पात प्रकृति के कारण ठीक उसी जगह गिरती है। इसी तरह जल की भी बात देखो है, जमीन अगर चलती है तो जब ऊपर का भाग नीचे हो जाएगा तो वहाँ जल गिर जाएगा। इसका उत्तर यदि वे यह दें कि नहीं, भूमि में एक वायु है ऐसी जल धारण वायु जो उस वायु के कारण वहीं जमीन पर पानी रहता है और गोल घूमने पर भी वह पानी समुद्र का कहीं अगल-बगल गिरता नहीं, तो जरा यह विचार

http://www.jainkosh.org

करो कि वायु अब दो प्रकार की माननी पड़ेगी—एक तो जल धारक वायु और एक जल प्रेरक वायु। जैसे समुद्र में लहर उठती है तो यह प्रेरक वायु की चोट से उठती है, जब जल धारक वायु आती और पृथ्वी में आकर्षण शक्ति है तो उस जल को तो बिल्कुल ठीक-ठीक रहना चाहिये उसमें तरंग क्यों उठती कि जो जल प्रेरक हवा चलती है उसकी प्रेरणा पाकर वह जल चल उठता है तो बतलाओ उस प्रेरक वायु के द्वारा जल धारक वायु क्यों नहीं तिरस्कृत हो जाती। सारा पानी फिर कहीं भी गिर जाए। तो जमीन को गोल मानने वाले एक किसी ने कोई दृष्टि दी सो आज कल कोई उल्टी दृष्टि दे तो उसमें दिल बहुत लगता है। सीधी बात में कोई बुद्धिमानी नहीं समझता। कोई टेढ़ी बात मिले, टेढ़ी बात बने उसमें लोग समझते हैं कि हमारी कला है। तो पृथ्वी को गोल माना और चक्कर लगाने वाली माना, पर एक बात वे बतायें कि वायु अगर घुमाती है तो वायु तो अटपट चलाने वाली चीज है। कभी किसी दिशा में कभी किसी दिशा में चलाती है। फिर तो पृथ्वी का घूमना सही नहीं हो सकता। पृथ्वी तो अटपट चलेगी। उसका ऐसा ही घूमने का स्वभाव है। तो जब अटपट वायु चलने का स्वभाव है, वायु के चलने में जब नाना विविधताएं हैं तो पृथ्वी इस ही ढंग से चले एक जो ढंग बताया है कि इस धुरी से चले, इस ही ढंग से चले, यह बात सम्भव नहीं हो सकती। वायु की वजह से अगर चीजें चलती हैं तो वह चीज सही एक रूप से नहीं चलती, कभी कहीं चल दे, कभी किसी ढंग में चल दे। मगर स्थिरता की बात एक ही ढंग की होती है। घन वायु है तो उसकी वजह से कोई चीज स्थिर है तो वह स्थिर ही है तो वायु का भ्रमण होना, वायु से पृथ्वी का भ्रमण होना यह बात सिद्ध नहीं होती है। इसमें बहुत विचार करना होगा, क्योंकि एक विषय यह ऐसा है कि कक्षाओं में भी भूगोल चलता, मास्टर लोग भी खूब पढ़ाते, और कुछ अनुसंधान शालायें भी बन गईं जिनमें यंत्र वगैरह रखकर इन बातों को सिद्ध करने का प्रयास किया जाता।

दृष्टिदोष से अन्यथा परिचय भूभ्रम की भ्रान्ति का कारण—एक रेलगाड़ी में बैठा हुआ पुरुष पास में दूसरी रेलगाड़ी भी खड़ी है तो जब एक रेलगाड़ी चलती जिसमें वह खुद बैठा है तो उसे बहुत देर तक यह भ्रम रहता कि कौन सी गाड़ी चल रही। अब इतनी देर में कोई कहीं पहुँचा कोई कहीं इतने में रेल वाले मुसाफिरों से कितनी दूरी हो गई ? यह सब हिसाब अपनी रेल चलती है मानो तो लगा लेंगे और दूसरी रेल चलती है मानो तो लगा सकते। चलती रही अपनी रेल और मान लिया कि उसकी रेल चलती है या उस रेल वाले मानें कि हम चल रहे तो दोनों का सही लग जायेगा लेकिन चलता कौन है सो देखो और भी देखो यह एक दृष्टि का फेर है। हम आँख से देखते हैं तो बाहर की चीजें संकुचित दिखती हैं। वे चीजें संकुचित हो गईं सो बात नहीं, मगर आँख द्वारा बाहर का दिखाव ऐसा है कि पास की चीज अपने आप भारी मालूम होगी और बाहर की चीज सिकुड़ी मालूम होगी। अभी आप यहीं देख लो—जहाँ रेल की पांत भी सीधी है, वहाँ आप एक जगह खड़े होकर देखें तो पाँत से भिन्न दूसरी पाँत ऐसी लगती है कि यह तो ३-४ फिट के फासले पर है, पर आगे आप देखें तो ३-४ फर्लांग की जो पाँत है वह लगता कि मिली हुई सी है। बतलाओ वह पाँत मिली हुई है क्या ? नहीं, पर दिखती है मिली हुई। तो इसी तरह जब चन्द्र, सूर्य का उदय होता है तो हम आप को लगता है कि जमीन से मिलकर उदय हुआ। जमीन में से निकलकर उदय हुआ है। वह सब दृष्टि का दोष है। चीज तो वहाँ बहुत दूर है पृथ्वी और चूंकि चन्द्र, सूर्य

Version 1

http://sahjanandvarnishastra.org/

स्वयं भ्रमण करते हैं तो भ्रमण करते-करते जब ये चन्द्र सूर्य बहुत दूर पहुँच गये उदय की दिशा में, अस्त की दिशा में तो बहुत दूर होने के कारण पृथ्वी से चिपटा सा लगता है। यह दृष्टि का दोष है। कहीं ऐसी ही बात वहाँ हो गई सो बात नहीं, पृथ्वी थाली की तरह गोल है अथवा बर्फी की तरह चौकोर है, मध्य लोक है गोल तिर्यक लोक, पर पृथ्वी तो बर्फी की तरह छः दिशा वाली है और उसके ५ ओर घनी वायु है। उस वायु से यह जमीन सधी भई है।

नरकगति में जन्म लेने की तैयारी का भाव—जिस जमीन के ऊपर हम आप रहते हैं यह पहली पृथ्वी का ऊपरी हिस्सा है। नारकी जाव इस पर नहीं रहते। इस पृथ्वी के तीन हिस्से और अन्दर हैं—ऊपर से नीचे को, उनमें जो नोच तीसरा हिस्सा है, उनमें बड़े-बड़े बिल हैं हजारों कोश के लम्बे चौड़े, उनमें नारकी जीव रहते हैं। यह सब नारकियों का वर्णन चलेगा। ये नारकी जीव बन कैसे जाते हैं? हैं तो हम आप की तरह के ही तो ये भी जीव हैं, कोई उनका ढंग स्वरूप अलग नहीं है कि ये ही जीव नारकी बनते हों। जो अपने भाव खराब रखता, अज्ञान भाव रखता, लड़ाई दंगे के भाव रखता, दूसरों के साथ अन्याय करता ऐसा जीव मरकर नरकगति में उत्पन्न होता है। एक कथानक है कि एक बाल्मीकि ऋषि हुए हैं, वे पहले तो बहुत प्रसिद्ध डाकू हुए। उनका मुख्य पेशा था चोरी, डाका, राहजनी आदि के काम करने का। बहुत से लोगों का धन उन्होंने लूटा। एक बार किसी जंगल में एक संन्यासी दीखा तो उसके पास भी जो कुछ था—लाठी, झोली, कमण्डल आदि के वह सब छीन लिया। वहाँ वह सन्यासी बोला—देखिये! मैं सन्यासी हूँ, मेरे ऊपर आप विश्वास करें। मैं यहां से कहीं जाऊंगा नहीं, यह सब सामान रखाये हुये मैं यहीं बैठा रहूंगा, तुम घर जाओ और घर के सभी लोगों से एक प्रश्न का उत्तर लेकर मेरे पास आवो फिर खुशी-खुशी से हमारा सब सामान ले जाओ बाल्मीकि को उस सन्यासी की बात पर विश्वास हो गया और कहा कहो—किस प्रश्न का उत्तर लेकर आयें? तो सन्यासी बोला—देखो तुम अपने परिवार के लोगों से पूछना कि हम जो तुम सबके लिए बड़े-बड़े अन्याय करके, पाप करके धन लाते हैं तो उस पाप का फल तुम लोग भी बाँट लोगे या नहीं? ठीक है। बाल्मीकि अपने घर पहुंचे, अपने परिवारजनों के सामने वही प्रश्न रखा तो परिवार का कोई भी व्यक्ति पाप का फल बाँटना तो दूर रहा, पाप की बात सुनना भी पसन्द न किया। वहाँ बाल्मीकि को ज्ञान जागा। लौटकर जंगल आये। बड़े विचारों में निमग्न थे—ओह मैंने बड़े-बड़े अन्याय करके पाप करके परिवार को सुखी रखा पर पाप का फल तो खुद को ही भोगना होगा। आखिर बाल्मीकि उस सन्यासी के पास आते हैं और सन्यासी से कह सुनाते हैं—महाराज परिवार के सभी लोगों ने यही उत्तर दिया कि हम लोग पाप का फल न बाँटेंगे, पाप का फल तो जो पाप करेगा वही भोगेगा। फिर सन्यासी बोला—अच्छा लो अब ले लो यह सब सामान। तो बाल्मीकि बोले—महाराज मुझे अब अन्य कुछ न चाहिये। यहाँ का सारा संग समागम बेकार है। मुझे तो आप अपना जैसा ही बना लीजिये। लो बाल्मीकि ऋषि हो गये। तो अन्याय करना, दूसरों का दिल दुखाना, झूठ बोलना, चोरी करना, पर निन्दा करना, कुशील सेवन करना, तृष्णा करना आदि पाप कार्य करने का फल है नरक गति में जन्म लेना।

नरकगति में जन्म लेने कारणों में बहु आरम्भ परिग्रहकी कारणत्व की प्रधानता-नरक जाने के जितने भी कारण हैं उन सबमें प्रधान कारण परिग्रह बताया गया है। सूत्रजी में कहा भी है–"बह्वारम्भपरिग्रहत्वं नारकस्य" बहुत-बहुत आरम्भ परिग्रह लालच (तृष्णा) होना नरकआयु के बन्ध का प्रधान कारण

Report any errors at vikasnd@gmail.com

http://www.jainkosh.org

है। आज का मानव परिग्रह की तृष्णा में बहुत-बहुत दौड़ लगा रहा है। बस उसे पैसा ही पैसा दिखता है। पैसे के प्रति, इतना अधिक लगाव है कि वह पैसे के आगे किसी को कुछ नहीं समझता। उसका त्याग नहीं कर सकता, परोपकार में नहीं लगा सकता। हाँ अपने परिजनों के लिये तो चाहे कर्ज भी लेना पड़े पर सब कुछ लगाने को तैयार हैं, पर कोई धर्म का काम आ जाये तो उसके लिये बड़ी सोच विचारी करनी पड़ती है। लेकिन ध्यान रहे कि घर के लोगों के ऊपर जो कुछ भी व्यय किया जा रहा है वह कोई पुण्य का (धर्म का काम नहीं है, वह तो मोहवश किया जा रहा है। वह तो पाप का ही प्रोग्रामवाला काम है, तृष्णा में ही शामिल है। तृष्णा से वह अलग नहीं होता। तो जो बहुत-बहुत आरम्भ परिग्रह रखता है ऐसा पुरुष नरक गति में उत्पन्न होता है और नरक में कैसा दुःख है वह सब इस अध्याय में बताया जायेगा। जिसको सुनकर रोंगटे खड़े हो जायेंगे, ऐसा कठोर दुःख है। तो ऐसे नारकी जीव कहाँ रहते हैं उसकी चर्चा चल रही है। ये रहते हैं पहली पृथ्वी में, नोचे के तीसरे भाग में। उसके नीचे दूसरी पृथ्वी है उसमें भी रहते हैं बीचो बीच पोल में। ऐसी ऐसी ७ पृथ्वियाँ है जिनमें नारकी जीव रहा करते हैं। तो इस पृथ्वी की ही बात चल रही है। ✓

भूभ्रम की मिथ्या बात को सिद्ध करने के लिए अनेक मिथ्या प्रलापों के संग्रह की आवश्यकता—पृथ्वी के बारे में शंकाकार मानता है कि पृथ्वी ऊपर नीचे घूमती, वायु घूमती, तो यह बतलाओ कि वायु अटपट क्यों नहीं घूमती ? यदि यह कहा जाये कि इस जमीन में रहने वाले जो लोग हैं उन सबका ऐसा ही भाग्य है कि जिनकी वजह से वायु बड़े ढंग से घूमती है, अटपट नहीं घूमती, तो अब दो प्रकार की बातें सामने खड़ी हो गईं। मगर यह बात देखो कि तुम अदृष्ट कैसे सिद्ध करोगे ? इसमें तो इतरेतराश्रय दोष है। जब अदृष्ट सिद्ध बने तो यह कल्पना करो कि प्राणियों के भाग्य के अनुसार जमीन बढ़िया ढंग से घूमती है और जब बहुत बढ़िया ढंग से घूम रही जमीन, यह बात सिद्ध हो तो प्राणियों का भाग्य सिद्ध हो। जैसे यहाँ के लोगों के सुख और दुःख देखे जाते हैं तो उससे भाग्य सिद्ध होते है, याने प्राणियों के भाग्य लगा है। प्रसंग के अनुकूल इस बात की सिद्धि भी तो चाहिये। तो यहाँ सुख दुःख देखे जाते हैं उससे प्राणियों का भाग्य सिद्ध होता। तो ऐसे ही अगर जमीन का पहले ढंग से घूमना सिद्ध हो तो प्राणियों का भाग्य सिद्ध हो। प्राणियों का भाग्य तो इसके परिणाम रचने में कारण है। सुख मिले, दुःख मिले, ज्ञान मिले, अज्ञान मिले। शंकाकार के ये कोई हेतु सही नहीं है। जैसा प्रतीति सिद्ध है, हम आप जाग रहे हैं उस तरह की बात है। यह कल्पना करना बिल्कुल गलत है कि जमीन में आकर्षण शक्ति (गुरुत्वाकर्षण) है इस लिए मनुष्यों को खींचे रहती है। अब भला बतलाओ जब पृथ्वी के ऊपर कोई मनुष्य खड़ा हैं और पृथ्वी को गोल-गोल घूमना मान रहे तो ऊपर से नीचे आने में उस मनुष्य की क्या हालत हो जायेगी ? वह तो नीचे आकर गिर जायेगा। उसके लिये कहते हैं कि जमीन खींचे रहती है। अब खींचे रहती है तो वे बतावें कि मनुष्य अपना पैर ऊपर कैसे उठा लेता है ? चलता कैसे है ? अगर खींचे रहती है तो दोनों पैर एकदम खींचे ही रहे, सारे के सारे मनुष्य पुतला से बने रहें। तो उनकी वह बात अटपट है। इस समय हम आप जो कुछ पृथ्वी पर बैठे, खड़े, चीजें रखी देख रहे हैं वह सब पृथ्वी की आकर्षण शक्ति के कारण नहीं किन्तु वस्तु की प्रकृति ऐसी है कि जो वजनदार वस्तु है वह नीचे गिरने का स्वभाव रखती है। यहीं देख लो और फिर यह पृथ्वी की ग्रहण शक्ति कैसा हौवा है कि यह वजनदार

Version 1

http://sahjanandvarnishastra.org/

चीज का तो ग्रहण कर लेती और जो हल्के पत्ते, कागज, गुब्बारे वगैरह हैं उनको नहीं खींच पाती। वे तो जरा सी हवा चलने पर ही ऊपर उड़ जाते हैं। क्या उन्हें खींचने में पृथ्वी समर्थ नहीं? तो बात यह है कि एक झूठ बात सही सिद्ध करने के लिए उनको अनेक झूठ बातें मिलानी पड़ीं। और फिर सही बात को सिद्ध करने के लिए युक्तियाँ भी न ढूंढो तो अनुभव बता देता है कि सच तो यह है वास्तविकता तो यह है। यहाँ यह बताया जा रहा है कि यह लोक किस प्रकार का है, जीव किस-किस ढंग से रहते हैं। जीवों की क्या स्थिति है। देखो कोई किसी दूसरे का मित्र नहीं, शत्रु नहीं, सब अपने-अपने भावों के अनुसार अपना काम करते हैं। लेकिन जो मोह रखेगा पर पदार्थों में तो उस ममता और तृष्णा का फल है नरक गति में उत्पन्न होना। ममता न रखें, अहंकार न रखें, धन वैभव को, समस्त बाह्य पदार्थों को गले से मत चिपकायें, उनमें आसक्ति मत बनावें। वैभव सम्पदा कुटुम्ब परिजन को ही अपना सर्वस्व न समझें। ये सब मिट जाने वाली चीजें हैं। जो अमिट है आत्मा का ज्ञान स्वरूप उसका अर्जन करने के लिए यत्न करना चाहिए।

धारक वायु द्वारा भूमि की स्थिरता—जो लोग भूमि को गेंद की तरह गोल मानते हैं वे दृष्टान्त में प्रयोग करके देखें कि यदि कोई गोल पाषाणखण्ड है और वह गोल घूम रहा है तो उस पर पानी डालेंगे तो स्थिर न रह सकेगा, तो इसी प्रकार यदि यह भूमि गोल है और बड़े वेग से ऊपर-नीचे चलती है तो पानी गिरता है। पानी ठहर न सकेगा। लेकिन देखा जाता है कि पानी बड़ी गम्भीरता से ठहरा ही रहता है। इससे सिद्ध होता है कि पृथ्वी गेंद की तरह गोल नहीं किन्तु थाली की तरह गोल है। अब यहाँ कोई एक आशंका और रखता है कि ये भूमियाँ हैं जिनको बताते हैं कि वायु के बल पर टिकी हैं तो वायु तो कोई जिम्मेदार चीज नहीं है, वह तो कहीं को चल जाए, तो फिर जमीन सब टपक जानी चाहिए। फिर स्थिर कैसे है यह? तो समाधान इसका यह है कि वायु दो प्रकार की होती है—(१) गतिशील और (२) स्थानशील। कितनी ही वायु स्थानशील हैं, चलती नहीं हैं, जहाँ की तहाँ रुकी हैं जैसे वायु यहां भी रुकी हुई मिलती है, ऐसे ही इस भूमि को साधने वाली जो वायु है वह गतिशील नहीं है, इस कारण धारक वायु होने से पृथ्वी की स्थिरता सिद्ध होती है। जैसे मेघों की धारक वायु है। मेघ ऊपर टंगे होते हैं। अब मेघ जो कभी-कभी गमन करते हैं तो वे प्रेरक वायु द्वारा गमन करते हैं। वे मेघ हैं आदिमान इसलिए वहाँ इस प्रकार की बात देखी जाती और ये पृथ्वियाँ हैं अनादि, तो अनादि से ही धारक वायु स्थिर है और उसके कारण यह पृथ्वी स्थिर रहा करती है। तो जो सब समय अनादि है, पृथ्वी और उसको धारने वाली वायु सदा न मानी जाये याने उस वायु में सदा धारण करने की शक्ति है ऐसा न माना जाए तो यों तो किसी भी वस्तु के बारे में कुछ से कुछ कहा जा सकता है। जैसे कोई कह दे कि आदमी आकाश आदिक में भी सदा मूर्त नहीं रहे, उनमें इन धर्मों के धारण का विरोध हो जाएगा। यदि कहो कि आत्मा और आकाश में और आधेय रूप अमूर्तत्व एवं व्यापकपना इनका अनादि सम्बन्ध है इस कारण वहाँ शंका नहीं है तो यही बात तो इस भूमि और भूमि को धारण करने वाली वायु का भी अनादि सम्बन्ध है अतएव यहाँ भी कोई विरोध नहीं है। अनादि से ऐसा ही चला आया है कि चारों ओर घनवायु है और उस पर भूमि स्थिर है, तो न तो भूमि गिरती है और न भूमि तिरछी भी चलती है, न ऊपर नीचे चलती याने भूमि में गतिशीलता बिल्कुल नहीं है। यह सदा स्थिर रहा करती है।

Report any errors at vikasnd@gmail.com

http://www.jainkosh.org

भूमियों की साकारता व ससीमता—अब यहाँ एक आशंका और की जा सकती है कि ये सब भूमियाँ अन्य भूमि के आधार से मानी जानी चाहिये, क्योंकि भूमि है। जैसे यहाँ हमारे ऊपर की भूमि किसी भूमि के आधार पर है तो वह भूमि भी अन्य भूमि के आधार पर होना चाहिए। इस तरह से कितनी भूमियाँ माननी पड़ेंगी, और फिर भी अनवस्था दोष न मिटेगा और इस तरह यह भूमि से भूमि लगी हुई सिद्ध हो जाने से यहाँ भूमि का कोई अन्त न आएगा। जब एक भूमि दूसरी भूमि के आधार पर है तो वहाँ कोई अलग बात तो न रही कि यह एक भूमि लगी, अब दूसरी भूमि लगी। जब एक एकदम आधार पर है तो कितनी हो भूमि लग जाए वह सब एक बात हुई और फिर उसका कभी अन्त न आएगा। तो भूमि असीम है, भूमि की म्याद न होगी चाहिए चाहिए क्योंकि भूमि को भूमि का आधार चाहिए और उसका आधार न मिला तो भूमि का अन्त न रहा। तो उसके उत्तर में कहते हैं कि यह भूमि असीम नहीं है, आकाश की तरह असीम होना चाहिए सो बात नहीं क्योंकि जिसमें आकार का भेद है वह चीज असीम नहीं हुआ करती। तो जब इस भूमि में आकार पाया जाता है तो यह असीम नहीं हो सकती है। जैसे पर्वत एक आकार वाला है तो पर्वत सीमा रहित नहीं हो सकता। जो संस्थान वाला न हो वही सीमा रहित होगा, जैसे आकाश। आकाश का आकार नहीं है तो वह सीमा रहित है। जिस-जिस चीज का आकार है वह कैसे सीमा रहित होगा ? अन्यथा आकार नहीं बन सकता। तो ये पृथ्वियाँ चूंकि आकारवान हैं इसलिये ये सीमारहित हैं और इनका आधार वायु है ही। तो इस प्रकार ये ७ भूमियाँ हैं जिनमें नारकी जीव रहते हैं।

नीचे नीचे पापाधिक फल योगियों की विशेषता का सूचक नरकों का नीचे नीचे होना—ये सब नीचे-नीचे भूमियाँ हैं और जितनी जो नीचे भूमियां हैं उनमें उत्पन्न होने वाले नारकी विशेष दुःख पाते हैं और उनके पाप अधिक हैं, पाप का फल अधिक है यह सब जीवों की गति की विचित्रता है जो नाना प्रकार के दुःखों के धाम में इस जीव को बसना पड़ता है। नरक भूमि का नीचे-नीचे सिद्ध होना इस कारण भी युक्त बैठता है कि प्राणियों के पाप विशेष की विचित्रता है और जैसे लोक व्यवहार में भी कहते हैं कि यह अधोगति को प्राप्त हो तो नीचे जन्म लेता उसको पाप का फल माना जाता। तो जिसके और विशेष पाप हैं वे और नीचे जन्म लेंगे, और अधिक पाप वाले और नीचे जन्म लेंगे, तो पाप की विचित्रता होने से नीचे-नीचे की भूमियों में इन प्राणियों का नारकभाव रूप में जन्म होता है।

नरक भूमियों की प्रभा और संख्या—अब सूत्र में जो शब्द दिया गया है उनमें जो प्रथम पद है वह तो एक नरक के अंधेरा उजेला प्रभा को बताने में सार्थक नाम वाला है। जैसे पहले ही कहा कि पहले नरक में रत्न जितनी प्रभा है, दूसरे नरक में शक्कर जितनी प्रभा है। तीसरे नरक में रेत जितनी आभा, चौथे नरक में कीचड़ जितनी, ५ वें नरक में धुआं जितनी, छठे नरक में अन्धकार जितनी और ७ वें नरक में घनघोर अन्धकार जितनी प्रभा है। ये सब भूमियों के नाम हैं और इन भूमियों के ये प्राकृतिक नाम हैं, याने एक तो सम्हाल कर नाम बोलते और एक सीधा प्राकृतिक जैसे बच्चों के भी लोग दो नाम रख देते, घर में कहने का और नाम व स्कूल में पढ़ने का और नाम। जैसे घर का नाम है पप्पू, मुन्ना आदि और स्कूल का नाम है प्रवीण कुमार, कोमल चन्द आदि। तो ऐसे ही उन ७ नरकों के भी ये सम्हले हुये नाम हैं, और उन नामों में कुछ नाम तो ऐसे लगते कि

http://sahjanandvarnishastra.org/

मानो यह कोई बड़ी अच्छी जगह होगी। जैसे एक बार एक साधु जो घर-घर में भिक्षा वृत्ति लेते थे स्थानकवासी साधु थे जिसने खुद घटना सुनायी कि एक साधु भिक्षा लेने गया तो वहाँ घर की स्त्री ने मना कर दिया कि अभी हम काम कर रही हैं भिक्षा देने की हमें फुरसत नहीं है, कहीं दूसरी जगह जाओ। तो उस समय उस साधु को कुछ गुस्सा सा आया और कह उठा कि अरे तू तो रत्न प्रभा जाएगी। यह बेचारी नासमझ स्त्री कुछ न समझी लेकिन रत्न प्रभा नाम सुनकर उसने समझा कि वह तो कोई अच्छी जगह होगी, सो बोली—महाराज हमारा ऐसा भाग्य कहाँ है कि हम रत्नप्रभा जाये, वहाँ तो आप ही जैसे भाग्यशाली जा सकते हैं। अब रत्नप्रभा नाम तो है पहले नरक का, सो वह साधु बड़ा शर्मिन्दा हुआ उस स्त्री का जवाब सुनकर। तो जो ७ नरकों के नाम लिए गए वे बिल्कुल सम्हले हुए नाम हैं, भूमियों की संख्या ७ बतायी गई है, अगर इन भूमियों का कोई संक्षेप करना चाहे तो कह दो कि एक ही है क्योंकि करक-नरक सब एक प्रकार के कहलाते हैं और कोई इनका विस्तार बनाना चाहे तो प्रत्येक नरक में उत्तम मध्यम जघन्य विभाग हैं। लेश्यावों की अपेक्षा, आयु की अपेक्षा सभी दृष्टियों से उनके तीन-तीन विभाग हैं, नरकों में रहने वाले नारकियों के शरीर की अवगाहना भी भिन्न-भिन्न प्रकार हैं। तो यों कह सकते कि २१ नरक हैं पर न संक्षेप रखा, न विस्तार रखा ऐसी संख्या यहाँ ७ बतायी गई है।

नरक भूमियों की दुःखरूपता—ये भूमियाँ ऐसी दुःखमयी हैं कि जिनका स्पर्श होते ही हजार बिच्छुओं के द्वारा डसे जाने जितनी वेदना हुआ करती है, अथवा जैसे किसी कमरे में फर्श पर बिजली का करेन्ट आ जाए तो उसके छूने से कष्ट होता है ऐसे ही करेन्ट जैसी नरकों की सारी भूमि है। वहाँ कौन सा स्थान छोड़कर जायें ? पर एक बात भी अनहोनी देखी जाती कि उन नरक की भूमियों में कोई असुरकुमार नाम के देव दयावश नारकियों को समझाने आ जावें, या उन्हें भिड़ाने आ जावें तो उन देवों को वह भूमि दुःखदायी नहीं बनती। तो ठीक है, ये सब कर्म के भेद वाले हैं। यहाँ भी तो कोई अगर रबड़ की चप्पलें पहने हो या काठका खड़ाऊ पहने हो तो उस पर बिजली के करेन्ट का असर नहीं होता, और लोगों के करेन्ट का असर हो जाता। तो उन भूमियों में भी कैसी ऐसी विचित्रता है कि नारकियों के लिए तो वह करेन्ट का जैसा काम करती है और देवों के लिए किसी प्रकार के दुःख का कारण नहीं बनती। तो जिनके पाप का उदय है उनके लिए यह सब दुःख की सामग्री बन जाया करती है। ऐसी भूमि ही क्या, प्राकृतिक दुःख के सारे साधन वहाँ हैं। वहां वृक्षों के जो पत्ते गिरते वे भी तेज धार वाले होते हैं। कोई नारकी यदि किसी पेड़ की छाया में आराम करने पहुँच जाये तो उस पेड़ के पत्तों के गिरने से उसका शरीर छिद जाता। उन नारकी देवों का वह वैक्रियक शरीर तिल-तिल बराबर खण्ड हो जावे पर भी पारे की तरह जुड़ जाता है, यही प्रक्रिया उनकी हरदम चलती रहती है। उनकी बीच में मृत्यु नहीं होती। तो इस तरह इन ७ भूमियों का सर्वप्रथम विवरण बताया गया।

आठ भूमियों का विश्लेषण—ये ७ भूमियाँ बरफी के आकार वाली छहों दिशाओं में एक समान समान भाग को लिए हुए हैं। इनकी दिशाओं में और नीचे घनी वायु है। जो स्थिर वायु है, जिस पर यह भूमि सधी हुई है, यह भूमि भ्रमण नहीं करती किन्तु सदा स्थिर रहती है किन्तु जैसे लोगों को प्रतीति है कि सूर्य, चन्द्र नक्षत्र दिखते हुये नजर आते हैं, ये मेरू पर्वत की प्रदक्षिणा करते हैं और मानो इसीलिए प्रदक्षिणा करते हों कि मेरू पर्वत का स्थान पवित्र माना गया है। तीर्थंकरों

Report any errors at vikasnd@gmail.com

http://www.jainkosh.org

का जन्म कल्याणक होता है, पाण्डुशिला बनती हैं, जिन शिलाओं पर इन्द्रदेव उनका अभिषेक करते हैं और मेरू पर्वत की प्रदक्षिणा करते ये नक्षत्र नजर आते हैं। कोई तारे ऐसे भी होते हैं जो ध्रुव रहते हैं। जहाँ है वहाँ स्थिर रहते हैं, उनकी गति नहीं होती। तो यह भी एक आशंका हो सकती है कि फिर तो हर समय वे ध्रुव तारे एक ही रूप से दिखने चाहिए, पर ऐसा तो नहीं देखने में आता। यों अनेक प्रकार से यह सिद्ध हुआ कि वे सब भूमियाँ स्थिर हैं और वे भूमियाँ कुछ कुछ अन्तराल के बाद ७ प्रकार की हैं। सिद्धान्त में भूमियाँ ८ कही गई हैं—७ तो नरक वाली और एक सिद्ध शिला। सिद्ध शिला पर सिद्ध नहीं हैं मगर सिद्धशिला के बाद थोड़ा ही अन्तर रहता है जहाँ सिद्ध भगवान विराजे रहते हैं। इन ८ भूमियों में अष्टम भूमि की बड़ी पूज्यता मानी गई है। उसकी पूजा भी है. लोग आदर से देखते भी हैं, सर्वार्थ सिद्धि से ऊपर है यह सिद्ध शिला है। और ये ७ भूमियाँ ये नरकों के स्थानभूत हैं। इस प्रकार ये ७ प्रकार की भूमियाँ बतायी गई हैं तो यहां एक यह जिज्ञासा बनती है कि उन भूमियों में ये नारकी जीव क्या इसी तरह रहते हैं जैसे कि यहाँ मनुष्य और तिर्यञ्च रहा करते हैं? खुला हुआ स्थान है। आकाश सारा लम्बा चौड़ा असीम नजर आता है और इसमें ये जीव भ्रमण करते हैं एक इस तरह के उनके स्थान हैं या अन्य प्रकार से? उनके उत्तर में सूत्र कहते हैं।

तासु त्रिंशत्पञ्चविंशति पञ्चदशदशत्रिपञ्चोनैक।
नरक शत सहस्राणि पञ्चचैव यथा क्रमम् ॥२॥

नरक की सात भूमियों में बिलों की संख्या—उन सातों भूमियों में क्रम से ३० लाख, २५ लाख, १५ लाख, १० लाख, ३ लाख, ५ कम एक लाख और ५ बिल हैं। इन्हें बिल तो कहा गया है लेकिन इनका प्रमाण लाखों,करोड़ों कोसों का और कितने ही का तो अनगिनते कोशों प्रमाण है। बिल नाम इसलिए रखा गया है कि इन बिलों का जमीन के किसी ओर भी मुख नहीं है। जैसे लम्बे चौड़े, मोटे काठ में बीच में कई छेद हों और ऊपर से न दिखते हों इस तरह के स्थान इन बिलों के होते हैं। ये बिल भी किस प्रकार के संस्थान में रचे गए हैं कि पहले नरक में १३ जगह बिलों की रचना है ऊपर से नीचे की ओर। इसे कहते हैं प्रस्तारपटल। प्रत्येक पटल में दिशाओं में तिरछे सरव श्रेणी-बद्ध अथवा फैलफुट अनेक बिल पाये जाते हैं। इन बिलों में ऊपर कुछ घंटाकार कुछ खोंटे आकार के स्थान बने हुए हैं। जिनमें से नारकी जीव टपक कर गिरते हैं और गिरते ही अनेक बार गेंद की तरह उछलते हैं और जब स्थिर होते हैं तो चारों ओर से नारकी मारपीट करने के लिए घेर लेते हैं। यह नारकी जीव भी समर्थ हो जाता है तो यह भी उनको मारने पीटने में समर्थ हो जाता है। इस तरह वहाँ का प्रोग्राम केवल कलह, विवाद, लड़ाई, यही रहता है। उन स्थानों में भी कोई ज्ञानी सम्यग्दृष्टि नारकी हो तो मारपीट से तो छुट्टी नहीं मिलती किसी को, वह तो एक कर्म की प्रेरणा है उसे तो करना ही पड़ेगा, लेकिन जिनकी अन्तर्दृष्टि जगी है निज आत्मा में अन्तः प्रकाशमान सहज चैतन्यस्वरूप का बोध किया है वह पुरुष अन्तः निराकुल रहता है आकुलता व्यग्रता तो वहाँ भी है मगर तत्त्वज्ञान के बल पर अन्तः धैर्य रखता है और वह वहाँ भी अपनी योग्यतानुसार कुछ कर्मों की निर्जरा करता है, पर ऐसे जीव बिरले ही हैं। उन नारकों में तो सदा उपद्रव ही उपद्रव रहा करता है। इनके बिल हैं और उनकी बड़ी खोंटी रचना है, उनमें प्राणियों को जन्म लेना पड़ता है, इसका कारण उन पुरुषों का अदृष्ट विशेष है। पहले जो पाप कमाया है उनके फल में

Version 1

http://sahjanandvarnishastra.org/

ऐसे-ऐसे बिलों में उन नारकियों को जन्म लेना होता हैं। जन्म स्थान से ही किसी जीव के जीवन का सब परिचय मिल जाता है। जैसे यहाँ भी मनुष्य किसी के आवास स्थान को परखकर, कहीं उसमें यह जरूरी नहीं कि महल ही हो, झोपड़ी न हो। चाहे झोपड़ी हो चाहे महल हो, उसकी सजावट, उसमें किस प्रकार के चित्र हैं, किस प्रकार की कोई सामग्री रखी है उससे यह जान लिया जाता है कि इसमें रहने वाला यह मनुष्य किस प्रकार के अभिप्राय का है और कैसा पुण्यवान है या पापोदय वाला है। तो नारकियों के तो ये सारे बिल, इनकी रचना, अंधेरा ये सारी बातें इसको सिद्ध करती हैं कि उनके दुर्भाग्य के बहुत अतिशय हैं।

प्रथम नरक की रचना का प्रारम्भ स्थान—पहली पृथ्वी का नाम रत्न प्रभा है। इसकी मोटाई १८०००० योजन की है। उसके तीन भाग हैं। ऊपर से जो पहला भाग है उसका नाम खर-भाग है। दूसरे का नाम पंकबहुल भाग है। तीसरे का नाम अब्बहुल भाग है, जो ये तीन नाम रखे गये हैं वे किस रूढ़ि से रखे गये हैं ? उसमें इस रूढ़ि का आधार है कि यदि कोई कुंआ खोदे तो सबसे पहले खर पृथ्वी बनती है याने कड़ी-कड़ी सूखी पृथ्वी। इसके बाद फिर कीचड़ वाली जमीन निकलने लगती है और सबसे नीचे पानी मिलता है। सो रत्न प्रभा के जो तीन भाग किये हैं उनमें यह बात तो नहीं है मगर इस आधार पर ये रूढ़ि शब्द हो गये हैं, इन तीन भागों में सो जो पहला भाग है उसमें रत्नमयी भूमियाँ अधिक हैं और उस भाग का विस्तार मोटाई १६ हजार योजन है। खर पृथ्वी भाग में ऊपर से एक हजार योजन छोड़कर और नीचे का एक हजार योजन छोड़कर जो बीच का हिस्सा १४ हजार योजन का बचता है इस हिस्से में ७ प्रकार के व्यन्तरों के निवास स्थान हैं और ६ प्रकार के भवनवासियों के निवास स्थान हैं। व्यन्तर सब ८ प्रकार के होते हैं जिनमें राक्षस नाम के व्यन्तरों का निवास इस पहले भाग में नहीं है शेष ७ प्रकार के व्यन्तरों का निवास इस पहले भाग में है। ये सात प्रकार के व्यन्तर ये हैं —किन्नर, किंपुरुष, महोरग, गंधर्व, यक्ष, भूत और पिशाच। इन ७ प्रकार के व्यन्तरों का निवास पहले भाग में है और जिन भवनवासियों का निवास स्थान इस पहले भाग में है वे भवनवासी ये हैं—नागकुमार, विद्युत्कुमार, सुवर्ण कुमार, अग्नि कुमार, वात कुमार, स्तनित कुमार, उदधि कुमार, द्वीप कुमार, दिक्कुमार। ये आवास बहुत लम्बे चौड़े हैं, इनमें बड़े-ऊँचे महल बने हैं और उनमें चैत्यालय भी बने हुए हैं और अकृत्रिम हैं। इस रत्न प्रभा भूमि के दूसरे भाग में जिसका कि नाम रखा है पंकबहुल भाग। उसमें असुर जाति के भवनवासी देव राक्षस जाति के व्यन्तर देव रहते हैं। उनके बहुत बड़-बड़े आवास स्थान हैं। अब इस रत्नप्रभा के तीसरे भाग में जिसका कि नाम अब्बहुल भाग है इस अब्बहुल भाग में ये सब पहिली पृथ्वी के नरक १३ पटलों में हैं।

पहिले नरक के बिलों की रचना—प्रथम नरक के प्रत्येक पटल की रचना इस प्रकार है कि बीच में तो इन्द्रक बिल है और चारों दिशाओं की ४ श्रेणियों में पंक्तिबद्ध बिल हैं जिनकी संख्या अलग-अलग नियत है और चार विदिशाओं में भी पंक्तिबद्ध श्रेणियाँ हैं। जो दिशाओं के बिल में एक-एक कम है। अब बीच में जो स्थान बचता है दिशा और विदिशा की पंक्ति के बीच में जो भी खाली स्थान हैं, उनमें प्रकीर्णक बिल हैं याने फैलफुट बिल हैं। जो कोई पंक्तिबद्ध नहीं हैं, किंतु यत्र-तत्र अटपट लाइन में बिल हैं ये। इस तरह एक पटल की रचना है। उसमें कुछ नीचे चलकर दूसरा अन्य पटल बनता है। उसमें भी इसी ढंग से रचना है। इस तरह से एक से एक नीचे पटल हैं, उनमें ये बिल

Report any errors at vikasnd@gmail.com

http://www.jainkosh.org

हैं इन सब १३ पटलों में बिल ३० लाख हैं जोकि सूत्र में बताये गये हैं कि पहले नरक में ३० लाख बिल हैं। उन ३० लाख बिलों का फैलाव इस तरह है कि पहले पटल के बीच में सीमंतक नाम का इन्द्रक बिल है और चारों दिशाओं में ४९-४९ पंक्ति बद्ध बिल हैं और विदिशाओं में ४८-४८ बिल हैं। तो इस तरह इन्द्रक और श्रेणी बद्ध बिलों की कुल संख्या पहले पटल में ३८९ हैं। अब उसके नीचे दूसरा पटल है। उस दूसरे पटल के बीच में निरय नाम का इन्द्रक बिल है और श्रेणियों में दिशाओं में ४८-४८बिल और विदिशाओं में ४७-४७ बिल हैं। तो दूसरे पटल के इन्द्रक और श्रेणी बद्ध बिल मिलकर ३८१ हो जाते हैं। पहले पटल से ये बिल ८ कम हैं ४ दिशाओं के, ४ विदिशाओं के, ये ८ कम हो जाती हैं। फिर तीसरे पटल में जिनके बीच में रौरव नामक इन्द्रक बिल है और उसी विधि से एक-एक कम होकर श्रेणीबद्ध बिल ३७२ हैं, ये कोई ३७३ बिल हुए। अभी इन सब पटलों में प्रकीर्णक बिल नहीं बताये जा रहे हैं जो फैलफुट अटपट ढंग से जहाँ चाहे बने हुए हैं उनकी गिनती नहीं कही जा रही। अभी पटलों के इन्द्रक और श्रेणी बद्ध बिल ही बताये जा रहे हैं। इन पटलों का नाम जो इस इन्द्रक बिल का नाम है वही पटलों का नाम समझिये—चौथे पटल में जिसके इन्द्रक बिल का नाम है भ्रांत उसमें ये ३६५ बिल हैं। उद्भ्रांत नाम के पटल में ३५७ इन्द्रक श्रेणिबद्ध बिल हैं। संभ्रांत नाम के पटल में ३४९, असंभ्रांत पटल में ३४१, विभ्रांत पटल में ३३३, तप्त पटल में ३२५, त्रस्त पटल में ३१७, व्युतक्रांत इन्द्रक बिल वाले पटल में ३०९, अवक्रांत बिल वाले पटल में ३०१ और विक्रांत नाम से इन्द्रक बिल वाले १३वें पटल में २९३ हैं। इन सब १३ पटलों में इन्द्रक और श्रेणीबद्ध बिल मिलकर ४४३३ होते हैं। बाकी सब प्रकीर्णक बिल हैं सभी पटलों में, जिनकी संख्या २९९५५६७ है। ये सब मिलकर ३० लाख बिल हो जाते हैं। ये बिल बहुत बड़े विस्तार वाले हैं। कोई संख्यात हजारों योजन के विस्तार के हैं कोई अनगिनते हजार योजन के विस्तार के हैं। बिल नाम इसलिए रखा है कि इनका मुख, आने जाने का रास्ता पृथ्वी के किसी भी बाहरी हिस्से में नहीं है। चूहे के बिल का तो फिर भी बाहर से प्रवेश द्वार रहता है लेकिन इनमें प्रवेश द्वार भी नहीं है। अपने-अपने बिल के ऊपरी भाग में घटाकार जैसे खोंटी-खोंटी रचना के उपपाद स्थान होते हैं, उनमें से नारकी टपक कर नीचे गिरते हैं, ऐसी कठिन वेदनायें जीवों को उनके बाँधे हुए पाप कर्म के फल में प्राप्त होते हैं। जो जीव अपने विशुद्ध स्वरूप की सुध नहीं रखते और शरीर को ही अपना सर्वस्व जानकर उस शरीर के पोषण और विषयों में आसक्त रहकर जो अन्याय करता है। दूसरे जीवों को सताता है, अत्यन्त संक्लेश और कषाय परिणाम रखता है उसका फल है ऐसे बिलों में जन्म लेना।

द्वितीय नरक के बिलों की रचना—यह रत्नप्रभा नाम की पहली पृथ्वी नीचे जहाँ समाप्त होती है उससे दूसरी पृथ्वी की मोटाई से कम एक राजू का आकाश रहता है वहाँ से शर्करा प्रभा पृथ्वी शुरू होती है, जहाँ केवल शक्कर की भाँति सफेद-सफेद आभा मात्रा है उजेला नहीं। जैसे कभी अंधेरी रात्रि में शक्कर थोड़ी दिख भर जाये, अन्दाज हो जाए कि यहाँ शक्कर रखी है बस इतनी ही प्रभा इस शर्करा प्रभा नाम की दूसरी पृथ्वी में है। शर्करा प्रभा नाम की भूमि की मोटाई ३२ हजार योजन है। इस बीच में ११ पटल हैं। जैसे कि पहले नरक में पटलों की रचना थी उसी प्रकार इन पटलों की रचना है। बीच में है इन्द्रक बिल और दिशावोंकी श्रेणियों में बिल हैं, विदिशाओं में बिल हैं, इस दूसरे नरक के पहले पटल के बीच में संस्तन नाम का इन्द्रक बिल है जिसके दिशाओं में ३६-

http://sahjanandvarnishastra.org/

३६ बिल हैं, विदिशाओं में ३५-३५ बिल हैं। इस तरह इस पहले पटल में यह श्रेणी और इन्द्रक बिल २८५ हैं। बनक नामके इन्द्रक बिल वाले दूसरे पटल में कुल २७७ इन्द्रक समेत श्रेणीबद्ध बिल हैं। श्रेणियों में एक-एक बिल कम होते जा रहे हैं और इसी प्रकार विदिशाओं की श्रेणी में भी एक-एक बिल कम होते जा रहे हैं। मनक इन्द्रक बिल वाले पटल में २६९ श्रेणी इन्द्रक वाले बिल हैं। घाट इन्द्रक बिल वाले पटल में श्रेणी इन्द्रक के २६१ बिल हैं। संघात के पटल में २५३, जिह्व के पटल में २४५, उज्जिह्वक वाले पटल में २३७, अलोल इन्द्रक बिल वाले पटल में २२९, लोलुक वाले पटल में २२१, स्तन लोलुक वाले पटल में श्रेणी वाले २०५ बिल हैं। ये सब २६९५ बिल हुए। शेष सब २४९७३०५ प्रकीर्णक बिल हैं, जो सब मिलकर २५ लाख बिल होते हैं। पहली पृथ्वी की अपेक्षा दूसरी पृथ्वी के बिलों में रहने वाले नारकी विशेष दुःखी रहते हैं और उनके परिणाम क्रिया अधिक खोंटी रहती है।

तीसरे नरक के बिलों की रचना—इस शर्करा प्रभा पृथ्वी के नीचे आकाश है खाली, उसके नीचे तीसरी पृथ्वी है, जिसका नाम है बालुका प्रभा। बालुका प्रभा नाम की पृथ्वी २८००० योजन की मोटी है। इस पृथ्वी में कुल ९ पटल हैं। पहले पटल में तप्त नाम का इन्द्रक बिल है, इसमें श्रेणी बद्ध बिल २५-२५ दिशाओं में हैं। २४-२४ विदिशाओं में हैं ये सब मिल कर १९७ हुए। त्रस्त वाले पटल में १८९, तपन वाले पटल में १८१, आतपन वाले पटल में १७३, निदाघ वाले पटल में १६५, ज्वलित वाले पटल में १५७ जाज्वलित वाले पटल में १४९, संज्वलित वाले पटल में १४१, संप्रज्वलित वाले पटल में १३३ है। ये सब श्रेणीबद्ध बिल और इन्द्रक बिल मिलकर १४८५ हैं। शेष १४९८५१५ प्रकीर्णक बिल हैं। जिनको मिलाकर इस तीसरी पृथ्वी में १५ लाख बिल हो जाते हैं। सभी नरकों में इन्द्रक बिल के जो नाम हैं वे नाम सुनने में भी जब इतने कटु लगते हैं जैसे तप्त, त्रस्त, ज्वलित आदिक नाम हैं। तो ये सब सही ढंग से नाम हैं। इन नरकों में रहने वाले नारकियों की वेदना दूसरे नरक वाले नारकियों से अधिक कठिन है।

चौथे नरक में बिलों की संख्या—तीसरी पृथ्वी में नीचे बहुत सा आकाश छोड़कर पंक प्रभा नाम को चौथी पृथ्वी आती है। जिसकी मोटाई २४ हजार योजन की है। इस पृथ्वी में ७ पटल हैं, जिन पटलों के इन्द्रक बिलों के नाम आर, मार, तार, वर्चस्क, वैमनस्क, खाट और अखाट नाम के हैं। इन पटलों में इन्द्रक सहित श्रेणी वाले बिल क्रम से १२५, ११७, १०९, १०१, ९३, ८५ और ७७ हैं। ये सब बिल ७०७ होते हैं। इनमें जो प्रकीर्णक बिल हैं वे ९९९२९३ हैं। ये सब मिल-कर १०००००० (दस लाख) बिल होते हैं। बिल का प्रमाण सभी बिलों की तरह है। संख्यात हजार योजन का और असंख्यात हजार योजन का विस्तार है। जो संख्यात हजार योजन के विस्तार वाले बिल हैं, उनकी मोटाई तो उन विस्तार के पंचम भाग प्रमाण है। और, जो असंख्यात योजन विस्तार वाले बिल हैं उनके चतुर्थ भाग प्रमाण उनकी मोटाई है। इन बिलों में प्रभा ऐसी है जैसे कि कीचड़ की प्रभा होती है। कीचड़ एक अन्धकार को लिए हुये ही है, लेकिन अन्धकार से कुछ कम अन्धकार होता है कीचड़ में। तो कीचड़ जैसी प्रभा होने के कारण इस चौथी पृथ्वी का नाम पंक प्रभा रखा है। इतना अन्धेरा है तिस पर भी इन नारकियों को दूसरे नारकी साफ दिखते हैं। यहाँ भी तो बिल्ली शेर वगैरह जानवरों को अन्धेरे में सब दिख जाता है। ऐसे ही उन नारकियों को अन्धेरे में सब दिखता है और फिर उनके कुअवधिज्ञान है। उस कुअवधिज्ञान के द्वारा वे सब खोंटी खोंटी बातों

Report any errors at vikasnd@gmail.com

http://www.jainkosh.org

का स्मरण रखते हैं। जैसे मानो माता ने बेटे की आंखों में पूर्व भव में अंजन लगाया था और वे दोनों माता, बेटा, मरकर नरक पहुँच जायें और उनका आमना-सामना हो जाए तो बेटे को कुअवधि ज्ञान के द्वारा ऐसा ही ज्ञान बनेगा कि इसने मेरी आँखें फोड़ने को आँखों में सलाई डाली थी, तो कुअवधि ज्ञान में खोंटी-खोंटी बातों का स्मरण होता है और मिथ्या बातों का स्मरण होता है, जिस स्मरण के कारण उनमें क्रोध अधिक बढ़े, और एक दूसरे नारकी को अधिक दुःख दे सकें। इस तरह परस्पर एक दूसरे को दुःख दें ऐसी आदत वाले नारकी वहाँ अपने सारे जीवन भर जिनकी आयु सागरों पर्यन्त की है, ऐसे ही दुःख में यो खोंटी करतूत में जीवन गुजारते हैं, यह सब पूर्व जन्म में किए हुए पाप, अन्याय, अत्याचारों का फल है।

पांचवें, छठे व सातवें नरक के बिलों की संख्या—धूम प्रभा नाम की ५ वीं भूमि में ५ पटल हैं जिनके नाम हैं तम, भ्रम, झष, अंध और तमिस्र। इन सब पटलों में एक-एक इन्द्रक बिल है और पहले-पटल की दिशाओं में ६-६ बिल, विदिशाओं में ८-८ बिल, ऐसे नीचे एक-एक कम होते गए हैं, उन सबकी संख्या २६५ है और इस भूमि में प्रकोर्णक बिलों की संख्या २९९७३५ है। ये सभी मिलकर ३००००० (तोन लाख) बिल होते हैं। इन सब बिलों में धुएं की तरह प्रभा है, जैसे धुआँ एक काला अंधेरा जैसा है वैसी ही वहाँ स्थिति है। तमः प्रभा नाम की छठवीं पृथ्वी में केवल ३ पटल हैं, जिनमें एक-एक इन्द्रक बिल है, जिनके नाम हैं हिम, वर्दल और लल्लक। पहले पटल में दिशाओं में श्रेणी बिलों की संज्ञा ४-४ है, विदिशाओं में श्रेणी बिल ३-३ हैं, दूसरे पटल में दिशाओं में ३-३ विदिशाओं में २-२ और तीसरे पटल में दिशाओं में २-२ और विदिशाओं में १-१, ये सब मिलकर ६३ बिल होते हैं, और इन दिशाओं विदिशाओं के बीच में प्रकीर्णों की संख्या ९९९३२ है। ये सभी बिल मिलकर ५ कम ३००००० हो जाते हैं। वहाँ अन्धकार ही अन्धकार है। महातमः प्रभा नाम की ७ वीं भूमि में केवल एक ही पटल है, जिनमें एक इन्द्रक बिल है और दूसरी दिशाओं में एक-एक बिल है। यों सब मिलकर ५ बिल हैं जिनका नाम है—पूर्व दिशा के बिल का नाम है काल और शेष दिशाओं के क्रमशः नाम हैं महाकाल, रौरव, महारौरव। सातों नरकों में समस्त पटलों की श्रेणी बिल और इन्द्रक बिलों की संख्या ९६५३ है और प्रकीर्णक बिलों की संख्या ८४९०३४७ है।

नरक जन्म तीव्र पाप दण्ड—इन सब बिलों में अशुभ विक्रिया के धारी नारकी जीव निरन्तर एक दूसरे पर प्रहार करते हुये दुःखी रहा करते हैं। ये नरक बड़े अशुभ संस्थान वाले हैं। बिल भी अच्छे संस्थान के नहीं हैं। टेढ़े-मेढ़े, ऊँट, गधों जैसे आकार के हैं और उन बिलों के नाम नरकों के नाम सोचन, रोदन, आक्रन्दन जैसे खोंटे-खोंटे नाम हैं, इन सब नरकों में प्राणी पापकर्म के वश से उत्पन्न होते हैं। यहाँ कोई पाप करे और यहाँ ही दण्ड मिले तो उसे इतना दण्ड नहीं मिल पाता जैसे कि पाप किया। जैसे मानो किसी मनुष्य ने अन्याय, अत्याचार करके सैकड़ों आदमी मार डाला तो यहाँ दण्ड मिलेगा तो मानो एक फाँसी मिल गई। एक बार मरण हो गया, पर इतने कठिन पाप का फल यहाँ के दण्डों से पूरा नहीं पड़ता। उनका उदय होता है और जीवों को नरक गति में जन्म लेना पड़ता है और वहाँ इन पाप फलों को भोगता है। पाप के भाव होते ही उसी समय उस ही प्रकार के कार्माण वर्गणाओं का बंध होता और जब वे कर्म बंध गये तो उनका उदयकाल जब आएगा तो उनका अनुभाग खिलेगा, उस समय में फिर यह जीव अपने उपयोग के परिणाम से खोंटा भाव करेगा। इस तरह जीवों की इन खोंटी गतियों में वृत्ति हुआ करती है। पूर्व जन्म में ये नारकी जीव

Version 1

http://sahjanandvarnishastra.org/

चाहे बहुत भले मित्र रहे आये हों, और दूसरे की सेवा में तत्पर रहे हों और यदि वे पाप कर्म के वश से नरक में जन्म ले लें तो वहाँ किसी की, किसी पर कृपा नहीं होती। जिसे जो दीखा वह उसको पीड़ा देता है। और उस आपसी पीड़ा, उत्पादन में सभी नारकी दु:खी हो जाते हैं। मित्रता का वहाँ नाम नहीं। भले ही वहाँ अनेक सम्यग्दृष्टि नारकी जीव भी हैं लेकिन कर्म विपाक ऐसा अशुभ है कि वे भी व्यवहारित: एक दूसरे पर दया नहीं कर पाते, रक्षा नहीं कर पाते। जैसा वहाँ वातावरण चल रहा है उसी वातावरण में वह सम्यग्दृष्टि नारकी भी ढल जाता है। भले ही सम्यक्त्व का उदय होने से अंतरंग में कुछ धैर्य रहता है फिर भी नरक गति का जो प्रभाव है वह सब नारकियों पर छा जाता है।

नारका नित्याशुभतरलेश्यापरिणाम देहवेदना विक्रिया: ।।३।।

नारकी जीवों के अशुभता लेश्या आदि का कथन— नारकी जीव नित्य अशुभतर लेश्या वाले, अशुभतर परिणाम वाले, अशुभतर देह वाले, अशुभतर वेदना वाले और अशुभतर विक्रिया वाले होते हैं। अशुभतर का अर्थ है अधिक खोंटे। लेश्या कहते हैं, कषाय के उदय से सहित योग की परिणति को। परिणाम का अर्थ भाव अभिप्राय आदिक है, देह मायने शरीर, वेदना अर्थात् पीड़ा, और विक्रिया कहते हैं, शरीर से कुछ हथियार आदिक बना लेने को, सबके सब नारकी जीवों में ये खोंटी चीजें होती हैं। यहाँ शब्द दिया है अशुभतर। जिससे सिद्ध होता है कि अमुक की अपेक्षा विशेष खोंटे तो यहाँ वे अपेक्ष्य कौन हैं जिनकी अपेक्षा ये सब खोंटे बताये गए हैं। नारकियों के अशुभ लेश्यायें होती हैं तो किसकी अपेक्षा ज्यादह अशुभ हैं। तो तिर्यञ्चों में अशुभ लेश्या पायी जाती है, उनकी लेश्यावों की अपेक्षा प्रथम नरक के जीवों में अशुभपना ज्यादह है, और प्रथम नरक के नारकियों से दूसरे नरक के नारकियों के लेश्या विशेष अशुभ हैं। इस तरह नीचे-नीचे के नरकों में अधिक से अधिक अशुभ लेश्यायें बढ़ती चली जाती हैं। ऐसी ही बात परिणाम आदिक में भी लगाना। ये भी नीचे-नीचे नरकों में विशेष-विशेष अशुभ होते जाते हैं।

नित्य का वाच्य अभीक्ष्ण—इस सूत्र में यह बताया गया है कि ये अशुभतर लेश्यादिक नित्य होते हैं। तो नित्य शब्द सुनकर यह शंका की जा सकती है कि नित्य तो उसे बोलते हैं जो कभी मिटे ही नहीं। जैसे आकाश नित्य है, वह कभी मिट नहीं सकता ऐसे ही नित्य अशुभतर लेश्या हैं तो इसके मायने है कि यह कभी मिट ही नहीं सकती, याने लेश्या कभी कम अशुभ बन ही न पाएगी। तो ऐसी अवस्था में फिर यह जीव नरक से निकल ही न सकेगा। समाधान इसका यह है कि नित्य कहने का अर्थ यह नहीं है कि निरन्तर ऐसा ही बना रहे किन्तु नित्य शब्द का प्रयोग अभीक्ष्ण अर्थ में है। जैसे किसी पुरुष के बारे में कहा जाए कि यह पुरुष नित्य हँसने वाला है तो क्या वह रात-दिन सोते में भी हँसता ही रहता है? अरे वहाँ नित्य हँसने का अर्थ है कि जब जरा भी कारण मिले तो वह तुरन्त हँस देता है। ऐसे ही जब तक नारकादिक भाव के कारण मिले हुए हैं तब तक ये अशुभतर लेश्या आदिक हैं, इसी तरह यहाँ तक नित्य कहा।

नारकी जीवों के अशुभतर लेश्या आदि का विवरण—अशुभ लेश्यायें तीन कहलाती हैं— (१) कृष्ण लेश्या, (२) नील लेश्या, (३) कापोत लेश्या। इनमें सबसे अधिक खोंटी है कृष्ण लेश्या, उससे कम खोंटी है नील लेश्या और उससे कम खोंटी है कापोत लेश्या। तो इन नरकों में प्रथम और दूसरे नरक में तो कापोत लेश्या होती है। तीसरे नरक में ऊपर तो कापोत लेश्या और नीचे

Report any errors at vikasnd@gmail.com

http://www.jainkosh.org

नील लेश्या होती है। चौथे नरक में नील लेश्या होती है। ५ वें नरक में ऊपर तो नील लेश्या होती है और नीचे कृष्ण। छठे में कृष्ण लेश्या और ७ वें में अत्यन्त कृष्ण लेश्या। ये लेश्यायें द्रव्य देह की बतायी गई हैं। याने नारकियों में अपनी आयु प्रमाण जो द्रव्य लेश्यायें रहती हैं उनके देह में भी बतायी गई हैं ये। भाव लेश्या भी ऐसी ही रहती है, किन्तु वह अन्तर्मुहूर्त में परिवर्तन करती रहती है। यों नारकी जीव अशुभतर लेश्या वाले होते हैं। इन नारकियों का परिणाम भी अशुभतर है। देह में तो स्पर्श, रस, गंध, वर्ण, शब्द ये परिणाम अशुभतर हैं। उनका क्षेत्र ऐसा ही खोंटा है कि जिनकी वजह से अत्यन्त दुःख के हेतु मिलते रहते हैं और उसी से परिणाम खोंटा चलता है। तो यों नारकियों के अशुभतर परिणाम कहे गये हैं। नारकी जीवों के देह अशुभतर होते है, क्योंकि अशुभ-नामकर्म का उदय है। अशुभ ही अंगोपांग रहते हैं, अशुभ ही स्पर्श, रस, गंध, वर्ण हैं, अशुभ ही स्वर है, संस्थान उनका अटपट हुँडक है। उनका आकार जैसे कटा छिदा कोई अंडज पक्षी है ऐसे ही शरीर के आकार वाला है। जिनका भयानक रूप है। दिखने से ही बड़ा भय उत्पन्न हो जाए ऐसा उनका अशुभ-तर देह है। वेदना उनकी बहुत खोंटी है। शीत की वेदना, उष्ण की वेदना जैसी जिन नरकों में जिस प्रकार की वेदनायें हैं वे वेदनायें उनकी खोंटी हैं। विक्रिया उनकी बहुत खोंटी है। यद्यपि शरीर तो वैक्रियक है मगर विक्रिया उससे खोंटी हुआ करती है। वह शरीर भी तो बहुत अशुभ है, यहाँ कफ, मल, मूत्र, खून, चर्बी, पीप, मांस, केस, हड्डी, चमड़ी आदिक जो-जो भी अशुभ पाये जाते हैं औदा-रिक शरीर में उससे भी अत्यन्त अशुभ वैक्रियक शरीर में अपवित्रता है। इनके देह उत्तरोत्तर नीचे-नीचे अधिक-अधिक ऊँचा, लम्बा चौड़ा देह होता जाता है। रत्न प्रभा नाम की पहली पृथ्वी में नारकियों के शरीर की लम्बाई ७ धनुष, तीन हाथ और ६ अंगुल है। एक धनुष चार हाथ का होता है। नीचे-नीचे इसके दुगने-दुगने होते चले जाते हैं, याने प्रथम नरक के नारकी का शरीर जितना ऊँचा है उससे दूना ऊँचा है दूसरे नरक के नारकी का, उससे दूना तीसरे का। इस तरह उत्तरोत्तर नीचे-नीचे के नारकी जीवों के देह दुगने होते चले जाते हैं और यह दुगनापन सप्तम नरक में ५०० धनुष प्रमाण बन जाता है, ऐसा उनका अशुभ देह है। वेदना भी उनकी अशुभ है। अन्तरंग में असा-ता वेदनीय का उदय है और बाहर में शीत उष्ण का बाह्य निमित्त है उससे उन नारकियों के तीव्र वेदना हो जाती है।

नरकों में उष्णता की वेदना व सर्दी की वेदना का विवरण—नरकों में पहले, दूसरे, तीसरे और चौथे नरक में गर्मी की वेदनायें हैं। ५ वें नरक में ऊपर के २००००० (दो लाख) बिलों में गर्मी की वेदना है और नीचे के १००००० (एक लाख) बिलों में सर्दी की वेदना है। छठे और ७ वें नरक में सर्दी की ही वेदना है। वहाँ ऐसी कठिन वेदना है कि जिसका अनुमान यहाँ के वेदनाग्रस्त मनुष्यों से की जा सकती है याने अधिक से अधिक गर्मी की वेदना मनुष्यों को जैसी हो सकती है उससे अनन्त गुणी गर्मी की वेदना नरकों में है, जैसे ज्येष्ठ मास के दिन हों, खूब दोपहर हो, आकाश में बादल जरा भी न हों, सूर्य की किरणों से सारी दिशायें अत्यन्त संतप्त हो गयी हों, जहाँ शीतल वायु का नाम तक नहीं है, वन का अग्नि की दाह के समान जहाँ दाह हो रहा हो, सूखा देश हो वहाँ कोई ऐसा मनुष्य बैठा हो कि जो चारों तरफ की अग्नि की लपटों से घिरा हो, प्यास से व्याकुल हो, पित्त ज्वर का रोग बढ़ गया हो। कोई उपाय न हो, ऐसे मनुष्य के जिस प्रकार का गर्मी से होने वाला दुःख है उससे भी अनन्त गुना दुःख उन उष्ण वेदना वाले नरकों में है ऐसे ही शीतवेदना का भी

Version 1

http://sahjanandvarnishastra.org/

अनुमान यहाँ के मनुष्यों से किया जा सकता है, माघ का महीना हो, जबकि बर्फ, तुषार खूब गिर रहा हो और नीचे भी जल से भरे हुये कीचड़ के अनेक स्थान हों उन दिनों रात्रि में जबकि खूब झंझा शीतल वायु चल रही हो, शरीर के रोमाञ्च हो गए हों, जिससे कि दाँत भी आपस में टकराकर बजते हों ऐसे समय में जिसको शीत ज्वर चढ़ा हो और ओढ़ने के लिये भी कोई चीज न हो, ऐसे मनुष्य के जिस प्रकार का शीत से उत्पन्न होने वाला दुःख होता है उससे भी अनन्त गुणा कष्ट शीत वाले नरकों में होता है। या यों कहो कि हिम्मान पर्वत सरीखा तांबे का पर्वत अगर उष्ण नरकों में फेंक दिया जाए तो तुरन्त ही वह गीला होकर द्रव के रूप में बहने लगेगा और ऐसा ही बहता हुआ द्रव (ताँब्र गिरि का रस) अगर शीत के नरकों में फेंक दिया जाए तो आंखों की पलक मात्र में ही वह एकदम घन कड़ा हो जाएगा। ऐसी उष्ण और शीत की वेदनायें उन नरकों में हैं। तो ऐसी अशुभ वेदना वाले वे नारकी जीव होते हैं।

नारकियों की अशुभ विक्रिया—इन नारकियों की विक्रिया भी बहुत अशुभ होती है। वे चाहे ऐसा संकल्प करे कि मैं शुभ विक्रिया को करू पर करेंगे तो अशुभ विक्रिया बन जाएगी। उन विक्रियाओं में क्या अशुभ बात है कि वे दुःख के कारणभूत ही होंगे। विक्रिया से ही वे हथियार बना लेते हैं। विक्रिया से ही वे सर्प आदिक बन जाते हैं। याने जिस प्रक्रिया से नारकियों को दुःख पहुँचे और ये भी खुद दुःखी हों ऐसी अशुभ विक्रिया उन नरकों में होती है। इस प्रकार नीचे-नीचे के नरकों में ये सब बहुत खोंटी-खोंटी अशुभ बातें होती चली जाती हैं। अब किसी को यह जिज्ञासा हो कि ये तो सब यहाँ के प्राकृतिक दुःख हैं, पर ये नारकी एक दूसरे को क्या परस्पर भी दुःख दे सकते हैं उसी को इस सूत्र में बताते हैं।

······ परस्परोदीरित दुःखाः······ ॥४॥

नारकियों द्वारा परस्पर दुःखों की उदीरणा—ये नारकी परस्पर में एक दूसरे को दुःख देते ही रहते हैं। दुःख देते रहने का कारण क्या है कि वे नारकी निर्दयी होते हैं और एक दूसरे को देखते ही उनमें प्रचंड क्रोध उत्पन्न हो जाता है। जैसे यहाँ किसी दूसरी जगह से आए हुए कुत्ते को देखकर एक कुत्ता दूसरे कुत्ते पर टूट पड़ता है, उनमें प्रकृत्या ही एक दूसरे के प्रति क्रूरता का भाव होता है, जातिकृत बैर भी है उनमें इसीलिए निर्दयता बढ़ी हुई है, तो वे कुत्ते एक दूसरे पर आक्रमण कर बैठते हैं ऐसे ही उन नारकी जीवों में कर्मोदयपरतन्त्रता से बाह्य अकारण ही ऐसी ही प्रकृति पड़ गई है कि जातिकृत बैर उनके बनता है। एक नारकी दूसरे नारकी को देख ले तो प्रकृत्या ही उन जीवों पर वैर उमड़ पड़ता है तब वे एक दूसरे को मारें, शरीर भेद डालें, छेद डालें, ऐसे दुःख उत्पन्न करते हैं। उसके अतिरिक्त उन नारकियों के जो अवधि ज्ञान होता है, मिथ्यात्व का उदय होने से वह अवधिज्ञान कुअवधिज्ञान कहलाता है। तो वे दूर से ही नारकी को देखकर पहले से ही दुःख के कारणों को जान लेते हैं। अपनी कोई पहले भव की कोई आपत्ति की घटना समझ लेते हैं उससे उनके क्रोध बढ़ जाता है और जब पास में आते हैं तो परस्पर में एक दूसरे को देखकर क्रोध की बहुत तेज अग्नि प्रज्ज्वलित हो जाती है। तब वे अपने शरीर में विक्रिया से शस्त्र, भाला, फरसा आदिक हथियार बना डालते हैं और उन हथियारों से एक दूसरे के शरीर छेद भेद देते हैं। इस तरह दुःख उत्पन्न किया करते हैं। तो एक नारकी दूसरे को दुःख दे रहा, दूसरा उसे दुःख दे रहा। देखते ही उनमें क्रोध अग्नि बढ़ती है और वे एक दूसरे का विनाश करने पर उतारू रहते हैं,

Report any errors at vikasnd@gmail.com

http://www.jainkosh.org

मगर उन नरकों में ऐसी कठिन बात है कि इतने दुःख होने पर भी, देह के छेदे जाने पर भी वे बीच में मरते नहीं हैं। बीच में उनकी आयु खत्म नहीं होती। यह कला उनके दुःख के लिए ही हो गई। इस प्रकार ये नारकी परस्पर में एक दूसरे को दुःख दिया करते हैं। अब यहाँ एक जिज्ञासा हुई कि क्या दुःख की उत्पत्ति के इतने ही कारण हैं या अन्य भी हैं ? सो बतलाते हैं।

संक्लिष्टासुरोदीरित दुःखाश्चप्राक् चतुर्थ्याः ॥५॥

असुरोदीरित दुःखों के निर्देशक सूत्र में कथित शब्दों का भाव—चौथी भूमि से पहले तक संक्लिष्ट असुर कुमार जाति के जीवों के द्वारा उत्पन्न किया गया है दुःख जिसको ऐसे नारकी होते हैं याने असुर कुमार जाति के वें देव जो खुद संक्लिष्ट परिणाम वाले हैं वे तीसरे नरक तक जाकर नारकियों को परस्पर भिड़ाते हैं, उनको दुःख देने के उपाय बताते हैं। तो इस प्रकार का पर प्रयोग जन्य दुःख भी इन तीन नरकों में है। इस सूत्र में जो-जो शब्द दिए हैं उनका क्या प्रयोजन है और क्या भाव है सो क्रम से देखिये—संक्लिष्ट मायने पूर्वभव के संक्लेश परिणाम से जो कर्म बांधे गए थे उन कर्मों का उदय होने से जो निरन्तर क्लिष्ट रहते हैं, परिणाम से दुःखी रहते हैं उन्हें संक्लिष्ट कहते हैं। असुर का अर्थ है असुर नामक कर्म के उदय से जो दूसरों से ईर्ष्या करे, दुःख दे उन्हें असुर कहते हैं, देव गति नाम कर्म के असंख्यात भेद हैं। जितनी तरह के देव हैं उतनी तरह की देवगति है, वे सब एक सामान्य देवगति में आ जाते हैं, मगर उनके आवान्तर भेद अनेक हैं तो असुर नाम का भी देवगति नामकर्म है। उसका काम है कि असुरपने की रचना कराना याने असुरपने का भाव बनने का कारण होना सो ऐसे कर्म के उदय से जो दूसरों से ईर्ष्या करें, उन्हें दुःख देवें, उन्हें असुर कहते हैं। उदीरित शब्द का अर्थ है कि प्रयोग कर, जानकर शीघ्र ही कोई बात कष्ट की ला देवें उनको उदीरित कहते हैं। जैसे उदय और उदीरणा, उदय तो एक क्रम प्राप्त चीज है, ठीक समय पर उदय हुआ, उसका फल मिले। और उदीरणा कहते—असमय में फल मिल जाये तो जो संक्लिष्ट असुर कुमार उनको उपाय बताते हैं यों भी अधिक कृत्रिमता आ गयी। अथवा कहो कि ये न होते तो चाहे उनको दुःख होने में विलम्ब लगता। इनकी प्रेरणा से उन्हें दुःख और जल्दी आ गये। यह भाव उदीरित शब्द बताता है। दुःख शब्द का अर्थ है कि जो इन्द्रिय को शरीर को बाधा देवे, बुरा लगे, सुहाये नहीं, जिसमें बेचैनी माने, वह सब दुःख है। यहाँ तक एक पद का अर्थ हुआ। इस पद में संक्लिष्ट और असुर ये जो दो शब्द दिए हैं तो विशेष्य तो है असुर और विशेषण है संक्लिष्ट। तो संक्लिष्ट शब्द देने का क्या प्रयोजन था ? अर्थ निकल आता कि असुर जाति के देवों द्वारा उत्पन्न कराया जाता। सो जो दुःख उत्पन्न कराये सो संक्लिष्ट तो होते ही हैं। समाधान दिया गया यह संक्लिष्ट शब्द, अन्य असुरों की निवृत्ति करता है याने सारे असुर कुमार नरकों में नारकियों को भिड़ाते नहीं हैं। किन्तु संक्लेश परिणाम वाले असुर कुमार जैसे अम्बावरीस जाति के असुर संक्लेश परिणाम वाले अधिक होते हैं और उनको दूसरों के लड़ाने-भिड़ाने में मौज आता है, ऐसे देव दुःख उत्पन्न करते हैं। यह बताने के लिए संक्लिष्ट शब्द दिया है। सूत्र में च शब्द देने का भाव यह है कि पहले जो दुःख बताये गये हैं वे तो नारकियों के होते ही हैं। उनके अतिरिक्त ये भी दुःख होते हैं। ऐसे पूर्व दुःख हेतुओं का संग्रह करने के लिये च शब्द दिया है।

आचतुर्थ्याः शब्द न कहकर प्राक् चतुर्थ्याः शब्द कहने का कारण-च शब्द के बाद शब्द आया है प्राक् चातुर्थ्याः चौथी भूमि से पहिली। उसमें एक जिज्ञासा हो सकती कि प्राक् चतुर्थ्याः न कहकर

Version 1

http://sahjanandvarnishastra.org/

आचतुर्थ्याः ऐसा कहना चाहिये, क्योंकि आङ् का अर्थ भी यही हो जायेगा कि चौथी भूमि से पहले फिर आचतुर्थ्याः कहने से सूत्र का लाघव होता है याने सूत्र छोटा बन जाता है। जो भले के लिए है फिर प्राक् शब्द क्यों दिया गया है ? समाधान इसका यह है कि प्राक् शब्द न देते और मात्र आचतुर्थ्याः इतना कहते तो आ बना है आङ् शब्द से और आङ् शब्द का अर्थ मर्यादा भी है और अभिविधि भी है। जैसे कोई कहे कि स्टेशन तक जाओ तो उस तक का क्या अर्थ लगावें ? स्टेशन जहां से शुरू होता है वहां तक जाओ याने स्टेशन से पहले तक जाओ और यह भी हो सकता कि स्टेशन को भी अपनी गोद में रख लो, तो ऐसे हो आ शब्द देने से दोनों अर्थ ध्वनित हो जाते हैं। चौथी भूमि तक याने चार नरकों तक देव जाते यह भी अर्थ हो सकता था और यह अर्थ तो अनिष्ट ही है क्योंकि चौथे नरक से पहले नरक तक ही ये देव जाते हैं। तो आङ् शब्द कहते तो दोनों अर्थ ध्वनित हो जाते तब संदेह हो जाता कि क्या असुर कुमार चौथे नरक तक जाते हैं या चौथे नरक से पहले तक जाते हैं। उस सन्देह का निवारण करने के लिये सीधा शब्द दे दिया "प्राक्", याने चौथी भूमि से पहले, सो यही निणय बना कि तीसरे नरक तक जाते हैं।

पूर्व सूत्र में कथित उदीरित शब्द की अनुवृत्ति न लेकर उदीरित शब्द प्रयुक्त करने का प्रयोजन—यहां एक बात और जिज्ञासा में आ सकती है कि इससे पहले जो सूत्र कहा उसमें उदीरित शब्द आया है, सूत्र है —परम्परोदीरित दुःखाः, तो इस सूत्र में उदीरित शब्द तो आ ही गया और उसकी अनुवृत्ति ले लेंगे पूर्व सूत्र से। तो ५वें सूत्र में फिर उदीरित शब्द देने को क्या जरूरत है ? सूत्र भी छोटा हो जाता। तो समाधान इसका यह है कि चौथे सूत्र में उदीरित शब्द तो समास में आ गया और उसका अर्थ परस्पर में दुःख देने का आ गया तो उस उदीरित शब्द का यहां सम्बन्ध न बनाया जा सकता था। और साथ ही यह बात है कि उदीरित शब्द देने से अन्य कई प्रकार के दुःख दिये जा सकते हैं, उनका भी संग्रह हो जाता है। तब सूत्र का अर्थ हुआ कि संक्लेश परिणाम वाले असुर कुमार जाति के देव तीसरे नरक तक जाकर उन नारकियों को परस्पर में भिड़ाते रहते हैं।

उदीरित दुःख के निर्देशक दो सूत्रों को जुदा-जुदा कहने का प्रयोजन—अब यहां एक आशंका यह हो सकती है कि जो चौथा और ५वां सूत्र बनाया गया सो यदि दोनों का एक कर देते तो कितने ही शब्द कम हो जाते जैसे परस्परेणोदीरित दुःखाः संक्लिष्टासुरैश्च प्राक् चतुर्थ्याः ऐसा सूत्र बना लेते, फिर उदीरित शब्द दुबारा न कहना पड़ा, तब दोनों सूत्रों का एक ही वाक्य बनाकर एक ही सूत्र रच देते। भिन्न-भिन्न वाक्य बनाने की क्या जरूरत थी ? तो समाधान यह है कि एक उदीरित शब्द से काम चल जाता। फिर दूसरा उदीरित शब्द जो दिया है वह अनेक प्रकार के दुःखों का स्मरण कराता है। वे असुर कुमार जाति के देव उन नारकियों को सुध करा देते हैं। तुम इसको ताते लोहे का रस पिलाओ, तो वे अपनी विक्रिया से वैसा करने लगते हैं। कोई नारकी थोड़ा शिथिल हो जाये किसी को दुःखी करने में तो जैसे यहां लोग तीतरों को आपस में सीटी देकर लड़ा देते हैं। जैसे कुछ कमजोरी हो जाये लड़ते हुये कुत्ता, तीतर आदिक में तो फिर छू-छू कहकर मनुष्य उसमें तेज भरते हैं ऐसे ही वे संक्लेश परिणाम वाले असुर जाति के देव इन नारकियों को थोड़ा खाली बैठे देखें कदाचित तो उन्हें फिर से दुःखों की चोट देते हैं, उनका स्मरण कराते हैं। हुकुम सा देते हैं कि देखो बहुत तपते हुए लोहे के खम्भे में इसे चिपकाओ। वे नारकी दूसरे नारकी को यों दुःखी करने लगते हैं। तो ऐसे अनेक प्रकार के दुःख हैं। इसको बसूले से मारो, छुरे से इसका पेट काटो, तपे हुए

Report any errors at vikasnd@gmail.com

http://www.jainkosh.org

तेल से इसको सींचो, कोल्हू में इसे पेलो, इसको शूली पर चढ़ाओ, इस पर करोंत चलाओ, इसको व्याघ्र, सिंह, रीछ, हाथी, कुत्ता, भेड़िया,स्याल आदिक पशुओं से चिथाओ। ये पशु नरकों में नहीं होते, पर वे नारकी स्वयं विक्रिया से ऐसे पशु बनकर नारकियों को दुःख देते हैं। तपी हुई रेत पर इसको पाड़ दो आदिक अनेक प्रकार के दुःखोंमें प्रेरणा देते रहते हैं। इस तरह के असुर जाति के देव इन नारकियों को इतना दुःख देते रहते हैं। यहाँ कोई यदि यह जानना चाहे कि इन असुर कुमार के देवों को क्या पड़ी है जो नारकियों को इतना दुःख दिलाने का परिश्रम करते हैं? तो उत्तर यह है कि वे पापकर्म में अभिरत हैं और उनके प्राकृतिक ऐसा ही काम बन गया है कि जैसे यहां के युद्ध करने वाले मल्लों को देखकर उन्हें उकसाते रहते हैं और उस लड़ाई को देखकर इनको प्रीति होती है। लोग, तीतरों को आपस में लड़ाकर आपस में बड़ा मौज मनाते हैं। तो जैसे यहां के लोग दूसरों के लड़ाने-भिड़ाने में प्रेरक हो जाते हैं ऐसे ही इन पापों का सम्बन्ध कराने वाले पुण्य वाले इन असुर देवों को लड़ाई में प्रीति उत्पन्न होती है। जब वे नारकियों को एक दूसरे को मारते हुए देखते हैं या उनकी हिंसा कराते हैं असुर तो ऐसा देखने में वे बड़े खुश हुआ करते हैं। तो जो असुर कुमार या अम्बरीश संक्लेश परिणाम वाले हैं उन देवों का भी खोंटा भवितव्य देखें कि हैं यद्यपि ये देव, लेकिन उनने माया, मिथ्यात्व, निदान, तीव्र कषाय आदिक खोंटे भावों से ऐसा पाप का बन्ध किया या पापों का सम्बन्ध रखने वाले पुण्य का बन्ध किया कि उस पुण्यकर्म के उदय होने से उनकी ऐसी गति हो जाती और पापानुबंध होने से ऐसी प्रीति हो जाती कि पापी जीव आपस में लड़ें मरें तो इनको मौज आ जाता है। इस तरह छेदन भेदन आदि के द्वारा उन नारकियों के शरीर के टुकड़े-टुकड़े हो जाते हैं तिस पर भी वे आयु समाप्त से पहले नहीं मर पाते। और इन नारकियों को ऐसा दुःख हजारों लाखों वर्ष तक ही नहीं किंतु सागरों पर्यन्त भोगना पड़ता है। तो इस समय यह बतलाते हैं कि उन नारकियों को उत्कृष्ट आयु कितनी होती है, कितने समय तक नरक में रहते हैं और कितना दुःख सहते रहते हैं। इसके लिए सूत्र कहते हैं —

तेष्वेकत्रिसप्तदशसप्तदशद्वाविंशतित्रयस्त्रिं-
शत्सागरोपमाः सत्त्वानांपरा स्थितिः ॥६॥

नारकियों की उत्कृष्ट आयु का कथन—उन नरकों में प्राणियों की, नारकियों की उत्कृष्ट स्थिति एक सागर, ३ सागर ,७ सागर, १० सागर, १७ सागर, २२ सागर और ३३ सागर प्रमाण होती है। सागरोपम याने सागर की उपमा प्रमाण। सागर शब्द की उपमा से क्यों यहां इतने लम्बे काल का स्मरण कराया गया कि सागर बहुत जल समूह से भरा हुआ होता है तो ऐसे ही आयुकर्म बहुत अधिक निषेकों से जो भरा हुआ है याने नरक भव में होने वाली अवस्थाओं को धारण कराने वाले महान पुद्गल द्रव्य के समूह का संयोग है, यह बताने के लिये सागरोपम शब्द कहा गया है। तो एक सागर अनगिनते वर्षों का होता है, जिसकी गिनती नहीं है। जिसमें अनेक कोड़ा-कोड़ी पल्य आ जाते हैं, इतने काल का नाम एक सागर होता है। अब इस आयु के समय को निरख कर सब पटलों में विभाजित किया जाना चाहिये। नरकों में से सबसे कम आयु १० हजार वर्ष की होती है। यह आयु पहले पटल में मिलती है। उससे नीचे-नीचे जाने पर आयु बढ़ती चली जाती है। यह आयु किसकी बताई जा रही है? नरकों में रहने वाले प्राणियों की। नरकों की स्थिति नहीं समझें, इसीलिये सत्त्वानाम् यह शब्द देना पड़ा, नहीं तो कोई समझ ले कि नरकों की स्थिति है इतनी। और, यह

http://sahjanandvarnishastra.org/

स्थिति जब पूर्ण हो जायेगी सो नरक न रहेगा यह अर्थ नहीं है। नरक तो सदा काल से है, सदा काल रहेगा। उन नरकों में जो जीव जन्म लेते हैं। उनकी आयु बताई जा रही है। यह आयु उत्कृष्ट है। सूत्र में शब्द दिया है—परा याने उत्कृष्ट।

प्रथम नरक के प्रथम पटल में नारकियों की आयु का विवरण—पहले नरक में पहले पटल में उत्पन्न होने वाले नारकियों की जघन्य आयु १० हजार वर्ष की होती है और उत्कृष्ट आयु ९० हजार वर्ष की होती है। सीमांतक नाम का इन्द्रक बिल पहले पटल में मध्य में है उसमें तथा उससे सम्बन्धित सब बिलों में नारकियों की आयु अधिक से अधिक ९० हजार वर्ष की होती है। ऐसी नरक जैसी गतियों में जन्म लेने का मुख्य कारण क्या है? आत्मा की सुध न लेकर बाह्य पदार्थों की आसक्ति के कारण अन्याय, अत्याचार, दूसरों को पीड़ा पहुँचे, ऐसे-ऐसे कारणों से जो पाप बंधे, उसके उदय में ऐसी स्थिति उत्पन्न होती है। जीव अपनी सृष्टि अपने भावों के अनुसार करता है। जीव करता क्या है? जीव ने भाव किया निमित्त नैमितिक योगवश वहाँ ही कर्म बन्ध हुआ, उनका जब अनुभाग होता है तो ४ प्रकार की प्रकृतियाँ होती हैं—(१) जीवविपाकी (२) पुद्गलविपाकी (३) क्षेत्राविपाकी और (४)भवविपाकी। तो जीवविपाकी प्रकृतियों का अनुभाग यों फलता है कि उन कर्मों में अनुभाग खिला जैसे कपड़े की पोटली में एक चूने का डला बंधा हो और उसमें मानो कहीं से कुछ पानी गिर जाये तो वह डला उस पोटली में फैल जाता है। डले में उसका अनुभाग खिला मगर उसका निमित्त पाकर उस कपड़े की भी दशा बिगड़ जाती है, ऐसे ही जीवविपाकी कर्म में अनुभाग तो खिला उसका ही, जिसमें साक्षात विकार है और परिणति कर्म की ही हुई, पर जीव उपयोग स्वरूप, वहाँ झलके बिना तो रहता नहीं। अनुभाग की झलक आई जीव में तो उस समय तक अंधेरा जैसा छा गया, तिरस्कार हो गया ज्ञानस्वरूप का। उस स्थिति में यह जीव अधीर होकर विषयों में प्रीति करता, वाह्य पदार्थों का आश्रय लेता और इस तरह इसको दुःख उत्पन्न होता है। पुद्गल विपाकी प्रकृतियों का दूसरा ही ढंग है उदय का। पुद्गल विपाकी प्रकृति उदय में आई, जैसे शरीर नाम कर्म उदय में आया तो वह कुछ शरीर वर्गणाओं के साथ सम्मिलित होकर शरीर रचना का प्रारम्भ कराकर निवृत्त हो जाता है। वह कर्म की उपाधि तो दूर हो जाती है और शरीर वर्गणाओं का पिंड बन जाता है। जैसे कुम्हार घड़ा बनाता है तो मिट्टी से बनाता लेकिन उसमें पानी का सम्बन्ध रहता है, और पानी के सम्बन्ध के साथ मिट्टी के घड़े की रचना होती है और बाद में पानी सूख जाता है, केवल मिट्टी रह जाती है। तो जैसे उस घड़े का आकार बनने में पानी के उदय का सहयोग है। ऐसे ही इस शरीर रचना में पुद्गल विपाकी कर्म के उदय का सहयोग है। यह सब रचना जीवों के देहों की नाना प्रकार की होती है। इसका कोई करने वाला हो तो अनेक भूल पड़ जायें। कोई बात भूल जाये, कहीं याद न रहे, कोई पदार्थ बिना परिणमे रह जाये। लेकिन ऐसा होता ही नहीं है। सर्व पदार्थ अपने उपादान से परिणमते हैं और विरुद्ध उपाधि का सम्बन्ध मिल गया तो उसका सन्निधान पाकर विकार रूप परिणम जाते हैं इस तरह प्रत्येक पदार्थ में परिणमने की शक्ति पड़ी हुई है, तब स्वभाव से उत्पाद व्यय करते हैं। बस विकार में परिणति में बदल का निमित्त है अन्य का सन्निधान। जैसे रेल का इंजन जाता है तो उसका केवल जाने का ही काम है। दिशा बदलना काम नहीं है। नीचे पाइंटमैन जैसी लाइन बदल देता है वैसा इंजन को वहाँ जाना होता है। जैसे इंजन में गति खुद की है, पर बदल खुद के स्वभाव में नहीं है ऐसे ही सर्व पदार्थों में परिणम

Report any errors at vikasnd@gmail.com

http://www.jainkosh.org

ने की बात खुद ही है, स्वभाव से है, उत्पादव्यय ध्रौव्य युक्त पदार्थ होता ही है मगर उनमें विचित्र विभाव विकार की परिणति खुद के स्वभाव में नहीं है। इस तरह कर्म से परतन्त्र हुआ जीव इन नारकादिक गतियों में भ्रमण करता है और नरकों में ऐसी बड़ी-बड़ी आयु की स्थिति लेकर अपने को जीवन भर दुःखी रखता है।

प्रथम नरक के द्वितीय से लेकर तेरहवें पटल तक के नारकियों की आयु का विवरण—पहले नरक के दूसरे पटल में रहने वाले नारकियों की जघन्य स्थिति ६० हजार वर्ष है, उत्कृष्ट स्थिति ६० लाख वर्ष है और मध्यम स्थिति इन दोनों के बीच एक-एक समय बढ़ाकर लगा लेना चाहिये। तीसरे पटल में नारकियों की जघन्य आयु एक पूर्व कोटि की है, उत्कृष्ट आयु असंख्यातपूर्व कोटि की है। मध्यम इसके बीच में नाना प्रकार समझना है। चौथे पटल में नारकियों की जघन्य आयु असंख्यात पूर्व कोटि है और १/१० सागर उत्कृष्ट है याने एक सागर के १० वें भाग प्रमाण है। मध्यम आयु इनके बीच में नाना प्रकार की है। ५ वें पटल में नारकियों की जघन्य आयु एक सागर का १/१० भाग प्रमाण है, उत्कृष्ट आयु २/१० सागर की हैं, मध्यम आयु इनके बीच की है। छठे पटल में नारकियों की जघन्य आयु २/१० सागर है, उत्कृष्ट आयु ३/१० सागर है। मध्यम आयु इनके बीच की नाना प्रकार है। अब ७ वें पटल में नारकियों की जघन्य आयु ३/१० सागर है, उत्कृष्ट आयु ४/१० सागर है। मध्यम आयु इनके बीच की नाना प्रकार का है। विभ्रान्त इन्द्रक वाले पटल में नारकियों की जघन्य आयु ४/१० सागर है, उत्कृष्ट ५/१० सागर है, मध्यम उसके बीच की है। प्रथम नरक के तप्त इन्द्रक बिल वाले पटल में नारकियों की जघन्य आयु ५/१० सागर है, उत्कृष्ट आयु ६/१० सागर है, मध्यम इसके बीच की है। त्रस्त नामक पटल में नारकियों की जघन्य आयु ६/१० सागर है, उत्कृष्ट आयु ७/१० सागर है। मध्यम इसके बीच की नाना प्रकार है। व्युत्क्रान्त इन्द्रक बिल वाले पटल में जघन्य आयु ७/१० सागर है, उत्कृष्ट ८/१० सागर है, मध्यम नाना है। अवक्रान्त इन्द्रक बिल वाले पटल में नारकियों की जघन्य आयु ८/१० सागर है, उत्कृष्ट आयु ६/१० सागर है, मध्यम नाना प्रकार की है। विक्रान्त इन्द्रक वाले पटल में नारकियों की जघन्य आयु ६/१० सागर है, उत्कृष्ट एक सागर प्रमाण है और मध्यम आयु नाना प्रकार की है। सामान्य रीति से यह बताया जाता है कि नारकियों की जघन्य आयु दस हजार वर्ष की होती है और प्रथम नरक में उत्कृष्ट आयु एक सागर की होती है। तो प्रथम नरक में जितने पटल हैं उन पटलों में भी इस उत्कृष्ट और जघन्य आयु का विभाग है। उसके अनुसार १३ पटलों में नारकियों की आयु का विवरण इस प्रकार है।

द्वितीय नरक में प्रत्येक पटल में उपजे नारकियों की आयु का विवरण—अब शर्करा प्रभा नाम की दूसरी पृथ्वी में ११ पटल हैं, उन सबके पटलों के नारकियों की क्रम से आयु का वर्णन गणित के अनुसार समझ लेना चाहिये याने जघन्य आयु तो एक सागर है और उत्कृष्ट आयु ३ सागर हैं और पटल इसमें ११ हैं। तो ११ पटलों का दो सागरों में विभाग बनाकर समझ लेना है। दूसरी पृथ्वी के पहले पटल में नारकियों की जघन्य आयु एक सागर है, उत्कृष्ट आयु १ २/११ सागर प्रमाण है। दूसरे पटल में १ २/११ सागर की जघन्य आयु है और उत्कृष्ट आयु १ ४/११ सागर प्रमाण है। तीसरे पटल में जघन्य आयु १ ४/११ सागर है। उत्कृष्ट आयु १ ६/११ सागर हैं। चौथे पटल में नारकियों की जघन्य आयु १ ६/११ सागर हैं, उत्कृष्ट आयु १ ८/११ सागर है। ५ वें पटल में नारकियों की

Version 1

http://sahjanandvarnishastra.org/

जघन्य आयु १ ८/११ सागर है उत्कृष्ट आयु १ १०/११ सागर हैं। जिह्व नामक छठवें पटल में नारकियों की जघन्य आयु १ १०/११ सागर है। उत्कृष्ट आयु २ १/११ सागर है। उज्जिह्विक नाम के ७ वें पटल में जघन्य आयु २ १/११ सागर है। उज्जिह्विक नाम के ८ वें पटल में नारकियों की जघन्य आयु २ ३/११ सागर है। उत्कृष्ट आयु २ ५/११ सागर है। दूसरी पृथ्वी के ९ वें पटल में नारकियों की जघन्य आयु २ ५/११ सागर है। उत्कृष्ट आयु २ ७/११ सागर है। लोलुक नाम के १० वें पटल में नारकियों की जघन्य आयु २ ९/११ सागर है। उत्कृष्ट आयु २ ९/११ सागर है। स्तनलोलुप नामक ११ वें पटल में नारकियों की जघन्य आयु २ ९/११ सागर है, उत्कृष्ट आयु ३ सागर है। सामान्य रीति से यह बताया गया है कि दूसरे नरक में कम से कम एक सागर की आयु है। ज्यादह से ज्यादह तीन सागर की, पर जैसे नरकों में यह क्रम है कि जैसे जैसे नीचे के नरक हैं तो उन नरकों में क्रम से बढ़-बढ़कर आयु है। तो यही बात पटलों में भी है। दूसरे नरक के ११ पटलों में नीचे-नीचे के पटलों में अधिक-अधिक आयु होती गई है जिन जीवों के जैसे-जैसे विशेष पाप का उदय है वे वैसे ही नीचे-नीचे के पटलों में उत्पन्न होते हैं और उनकी आयु अधिक होती जाती है।

तृतीय नरक के पटलों में रहने वाले नारकियों की आयु का विवरण—तीसरे नरक में ९ पटल हैं, जिनमें तप्त नामक पहले पटल में जघन्य आयु तीन सागर है, उत्कृष्ट आयु ३ ४/९ सागर है। त्रस्त नामक दूसरे पटल में जघन्य आयु ३ ४/९ सागर है और उत्कृष्ट आयु ३ ८/९ सागर है। तपन नामक तीसरे पटल में जघन्य आयु ३ ८/९ सागर है, उत्कृष्ट आयु ४ ३/९ सागर है। आतपन नामक चौथे पटल में जघन्य आयु ४ ३/९ सागर है, उत्कृष्ट आयु ४ ७/९ सागर है। निदाघ नामक ५ वें पटल में नारकियों की जघन्य आयु ४ ७/९ सागर है, उत्कृष्ट आयु ५ २/९ सागर है। ज्वलित नामक छठवें पटल में नारकियों की जघन्य आयु ५ २/९ सागर है, उत्कृष्ट आयु ५ ६/९ सागर है। जाज्वलित नामक ७ वें पटल में नारकियों की जघन्य आयु ५ ६/९ सागर है, उत्कृष्ट आयु ६ १/९ सागर है, संज्वलित नामक ८ वें पटल में नारकियों की जघन्य आयु ६ १/९ सागर है, उत्कृष्ट आयु ६ ५/९ सागर है। संप्रज्वलित इन्द्रक बिल वाले ९ वें पटल में नारकियों की जघन्य आयु ६ ५/९ सागर है, उत्कृष्ट आयु ७ सागर प्रमाण है। सामान्य रीति से तीसरे नरक में जघन्य आयु ३ सागर कही है, उत्कृष्ट आयु ७ सागर है। तो उसमें जो चार सागर अधिक आयु हुई है उस चार सागर के ९ भाग करके प्रत्येक पटलों में अधिक-अधिक किया गया है।

चौथे नरक के प्रत्येक पटलों में नारकियों की आयु का विवरण—चौथे नरक में ७ पटल हैं। सामान्य रीति से तो यह कहा जाता है कि चौथे नरक में जघन्य आयु ७ सागर की है और उत्कृष्ट आयु १० सागर की है, परन्तु जैसे-जैसे नीचे-नीचे पटल हैं वैसे ही वैसे आयु बढ़, बढ़कर आयु में भी विभाग बन जाते हैं। जैसे इस चौथी पृथ्वी के उत्तर नामक पहले पटल में जघन्य आयु ७ सागर प्रमाण है और उत्कृष्ट आयु ७ ३/७ सागर प्रमाण है। मार नामक दूसरे पटल में जघन्य आयु ७ ३/१० सागर है। उत्कृष्ट आयु ७ ६/७ सागर है। तार नामक तीसरे पटल में नारकियों की जघन्य आयु ७ ६/७ सागर है। उत्कृष्ट आयु ८ २/७ सागर है वर्चस्क इन्द्रक बिल वाले चौथे पटल में नारकियों की जघन्य आयु ८ २/७ सागर है। उत्कृष्ट आयु ८ ५/७ सागर है। वैमनस्क नामक ५ वें पटल में नारकियों की जघन्य आयु ८ ५/७ सागर है, उत्कृष्ट आयु ९ १/७ सागर है। खाट नामक छठवें पटल में जघन्य आयु ९ १/७ सागर है। उत्कृष्ट आयु ९ ४/७ सागर है। चौथी

Report any errors at vikasnd@gmail.com

http://www.jainkosh.org

पृथ्वी के अखाट नामक अन्तिम पटल में जघन्य आयु ९ ४/७ सागर है, उत्कृष्ट आयु १० सागर है।

पांचवे छटवें सातवें नरक के पटलों में नारकियों की आयु का विवरण धूम प्रभा नाम के ५वें नरक में जघन्य आयु १० सागर कही गई है, उत्कृष्ट आयु १७ सागर है। इसमें पटल ५ हैं। ता बढ़ी हुई जो ७ सागर आयु है, उसके विभाग ५ पटलों में कर लेना चाहिये। जैसे इस ५ वीं पृथ्वी के तम नामक पहले पटल में जघन्य आयु १० सागर है, उत्कृष्ट आयु ११ २/५ सागर है। भ्रम नामक दूसरे पटल में जघन्य आयु ११ २/५ सागर है उत्कृष्ट आयु १२ ४/५ सागर है झष नामक तीसरे पटल में जघन्य आयु १२ ४/५ सागर है, उत्कृष्ट आयु १४ १/५ सागर है। अन्ध नामल चौथे पटल में जघन्य आयु १४ १/५ सागर है, उत्कृष्ट आयु १५ ३/५ सागर है। तमिस्र नामक ५ वें पटल में नारकियों की जघन्य आयु १५ ३/५ सागर है, उत्कृष्ट आयु १७ सागर प्रमाण है। तमः प्रभा नाम के छठे नरक में केवल तीन पटल हैं। सामान्य रीति से इस नरक में जघन्य आयु १७ सागर है, उत्कृष्ट आयु २२ सागर है और पटलों के क्रम से पहले पटल में जघन्य आयु १७ सागर है व उत्कृष्ट आयु १८ २/३ सागर है। दूसरे पटल में जघन्य जायु १८ २/३ सागर है। और उत्कृष्ट आयु २० १/३ सागर है। तीसरे पटल में २० १/३ सागर है जघन्य आयु है, उत्कृष्ट आयु २२ सागर है। ७ वें नरक में केवल एक ही पटल है। इसमें विदिशाओं में भी बिल नहीं है। दिशाओं में एक-एक बिल है और बीच में इन्द्रक बिल है, इस प्रकार कुल ५ ही बिल हैं। इससे जघन्य आयु २२ सागर प्रमाण है, और उत्कृष्ट आयु ३३ सागर प्रमाण है।

प्रथम नरक के नारकियों की स्फुट विशेषतायें—पहले नरक के नारकियों के शरीर की अवगाहना छह धनुष, तीन हाथ छह अंगुल प्रमाण है। इन नरकों में कर्मों की प्रचण्ड वेदना होती है। असुर जाति के देव भी नाना प्रकार की याद दिलाकर और उनके दुःख के उपाय बताकर नारकियों के कष्ट बढ़ाने में मदद देते हैं। इस नरक में नारकी किसी समय एक भी उत्पन्न न हो ऐसा अगर नारकियों के जन्म का अन्तर होता है तो कम से कम एक समय अन्तर है कि जिस समय पहले नरक में कोई भी नारकी जन्म नहीं ले रहा और उत्कृष्ट अन्तर २४ मुहूर्त है। एक मुहूर्त २४ मिनट का होता है। पहले नरक में असंज्ञी जीव तक जन्म ले लेते हैं। एकेन्द्रिय, दो इन्द्रिय, तीन इन्द्रिय, चार इन्द्रिय, जीवों की उत्पत्ति नरक में नहीं होती। याने चार इन्द्रिय तक के जीव मरकर नरक में नहीं उत्पन्न हो पाते। पञ्चेन्द्रिय में मनुष्यों में पर्याप्तक मनुष्य जन्म लेते हैं, और तिर्यञ्चों में संज्ञी और असंज्ञी दोनों प्रकार के पञ्चेन्द्रिय पर्याप्त मरकर जन्म ले लेते हैं। कोई जीव सम्यग्दृष्टि मरण करें और सम्यक्त्व से ही निकलें ऐसे होते हैं। कोई मिथ्यादृष्टि है, मिथ्यात्व में मरण किया और मिथ्यात्व में ही पहले नरक में जन्म ले ले, और वे जीव मिथ्यात्व गुण स्थान से ही निकलें, ऐसे जीवों की बहुत संख्या है, कई जीव ऐसे हैं कि जो पहले गुणस्थान में मरण करके जन्म लें और दूसरा गुणस्थान पाकर वहाँ से निकल जायें। कुछ जीव पहले गुणस्थान में मरण कर नरक में जन्म लें और अन्त में चतुर्थ गुणस्थानवर्ती ज्ञानी होकर वहाँ से मरण कर अगला भव प्राप्त करेंगे।

द्वितीय नरक के नारकियों की स्फुट विशेषतायें—दूसरे नरक में नारकियों की अवगाहना १५ धनुष, दो हाथ, १२ अंगुल प्रमाण है। दूसरे नरक में भी गर्मी की वेदना है। असुर कुमार जाति के देव जाकर नारकियों का दुःख बढ़ाते हैं। दूसरे नरक में कोई भी जीव जन्म न ले, ऐसा अगर अन्तर पड़ सकता है तो ज्यादह से ज्यादह ७ रात दिन का अन्तर पड़ सकता है। याने ७ रात दिन ऐसे गुजर

Version 1

http://sahjanandvarnishastra.org/

सकते हैं कि जब कोई जीव दूसरे नरक में जन्म ही न ले रहा, सरीसृप जैसे जीव तक इस नरक में उत्पन्न हो लेते हैं। कई जीव ऐसे हैं जो पहले गुणस्थान में जन्म लें और पहले से ही निकले। कई नारकीय ऐसे हैं कि पहले गुणस्थान में जन्म लें और दूसरे गुणस्थानवर्ती होकर निकलें और कई नारक जीव ऐसे हैं जो पहले गुणस्थान में जन्म लें और चतुर्थ गुणस्थानवर्ती होकर वहां से निकलें।

तीसरे नरक में गर्मी की वेदना है। इस नरक में कोई जीव पहले गुणस्थान में जन्म लेता है और पहले गुणस्थान में ही मरण करता है। कोई जीव पहले गुणस्थान में जन्म ले और दूसरे गुण-स्थान में मरण करे। कोई जीव ऐसे होते हैं कि जो पहले गुणस्थान में जन्म लेते हैं और चौथे गुणस्थान में मरण करते हैं। इस नरक में यदि कोई जीव जन्म न ले पावे, कोई नारकी उत्पन्न न हो तो ऐसा अन्तर एक पखवारा तक रह सकता है याने १५ दिन ऐसे भी गुजर सकते हैं जबकि कोई भी नारकी इस तीसरे नरक में जन्म नहीं पा रहा। इस नरक में पक्षी तक उत्पन्न हो सकते हैं। तीसरे नरक तक के नारकी कोई तीर्थंकर प्रकृति बंध वाले वहाँ से मरण कर तीर्थंकर में जन्म लेता है। याने तीन नरक तक के नारकी तीर्थंकर पद को प्राप्त कर सकते हैं और उसके साथ जी जब तीर्थंकर तक हो लेते हैं तो ऐसे महापुरुष भी हो सकते हैं जो मोक्ष जा सकते हैं। तीसरे नरक तक ही असुर जाति के देवों का गमन है और तीसरे नरक तक अनेक भले देव आकर इन नारकियों को सम्बोधते भी हैं, जिनके सम्बोधन का निमित्त पाकर उन्हें सम्यक्त्व भी उत्पन्न हो सकता है। जो नारकी तीर्थंकर होंगे उनकी जब ६ महीना आयु शेष रहती है तो देवगण यहाँ आकर एक ऐसा कोट बनाते हैं जहाँ वे नारकी बड़ी सुरक्षा के साथ रहते हैं, तभी यह भी शोभा देता है कि तीर्थंकर के गर्भ में आने से पहले ६ महीने रत्न वर्षा होती है, तीर्थंकर के माता पिता के गृह नगर में। अन्यथा यह तो बड़ी बेतुकी बात रहेगी कि यहाँ तो हो रही रत्न वर्षा और जिस जीव के आगमन की खुशी में रत्न वर्षा हो रही है वह नरक में कुट पिट रहा हो सो ऐसा न होगा। ६ महीना पहले वहाँ भी भावी तीर्थंकर नारकी बहुत सुरक्षित रहते हैं। उन पर कोई आक्रमण नहीं कर पाता। तीसरे नरक के नारकियों की अवगाहना ३१ धनुष एक हाथ की होती है।

चतुर्थ व पंचम गुणस्थान में नारकियों की स्फुट विशेषतायें—चौथे नरक में उष्णता की वेदना है। यहाँ कोई नारकी यदि जन्म न ले तो ऐसा अन्तर एक महीना तक का पड़ सकता है याने चौथे नरक में कोई ऐसा भी समय गुजर सकता है कि जहाँ एक महीने तक कोई भी नारकी उत्पन्न न हो रहा हो। सर्प मरकर चौथे नरक में उत्पन्न हो सकते हैं। फिर इससे विशेष योग्य नर तिर्यंच प्राणी तो उत्पन्न हो ही सकते हैं, इन नरकों में कोई जीव पहले गुणस्थान में जन्म लेकर पहले ही गुणस्थान में मरण करता है, कोई पहले गुणस्थान में जन्म लेकर द्वितीय गुणस्थान से निकलते हैं। कोई जीव पहले गुणस्थान में जन्म लेकर चौथे गुणस्थान में मरण करते हैं। तीसरे गुणस्थान में तो कहीं भी किसी भी गति में मरण नहीं हुआ करता। चौथे नरक में नारकियों की अवगाहना ६२॥ धनुष की होती है ५वें नरक में रहने वाले नारकियों की अवगाहना अधिक से अधिक १२५ धनुष की होती है, इस नरक में ऊपर के २ लाख बिलों के स्थान ऐसे हैं जहाँ उष्ण वेदना होती है, पर उसके नीचे के एक लाख बिलों में शीत वेदना होती है। उष्ण वेदना से शीत वेदना का दु:ख भयंकर होता है और इसका अनुमान इससे करलें कि नरकों में नीचे तो शीत वेदना है और ऊपर उष्ण वेदना है। इन नरकों में नारकियों के जन्म का अन्तर पड़े अर्थात ऐसा कोई समय गुजरे कि लगातार

Report any errors at vikasnd@gmail.com

http://www.jainkosh.org

कोई नारकी ही इस पंचम नरक में उत्पन्न न हो रहा हो तो वह अन्तर काल अधिक से अधिक दो महीने तक रह सकता है। पंचम नरक में सिंह तक भी उत्पन्न हो सकते हैं जहाँ किसी जीव विशेष का नाम लेकर उत्पन्न होना बताया है उसका अर्थ यह लेना है कि यह जीव इस नरक से नीचे जन्म नहीं ले सकता। सिंह ५वें नरक तक ही जन्म ले सकते हैं, इससे नीचे उनका जन्म नहीं। इसी प्रकार जो पहले बताया गया था कि ऐसे प्राणी इस नरक तक जन्म लेते हैं तो वहाँ भी यही अर्थ लेना कि नीचे नरक में जन्म नहीं ले सकते। जैसे बताया था कि पहले नरक में असंज्ञी तक जन्म लेते हैं याने असंज्ञी पञ्चेन्द्रिय तक के जीव प्रथम नरक में जा सकते हैं। असंज्ञी पञ्चेन्द्रिय दूसरे नरक में या और नरकों में जन्म नहीं लेते हैं। इस पंचम गुण स्थान में कोई जीव मिथ्यात्व गुणस्थान में जन्म लेते हैं और मिथ्यात्व में ही मरण करते हैं। कोई जीव मिथ्यात्व गुणस्थान में जन्म लेते हैं और द्वितीय गुणस्थान में मरण करते हैं। कुछ जीव ऐसे होते हैं जो जन्म तो लें प्रथम गुणस्थान में और मरण करते चतुर्थ गुणस्थान में।

छठे व सातवें नरक के नारकियों की स्फुट विशेषतायें—छठे नरक में शीत वेदना ही है। इस नरक के नारकियों की अवगाहना २२५ धनुष की होती है। इस नरक में स्त्रियों तक का जन्म होता है मायने स्त्री छठे नरक तक ही नारकी हो सकती हैं। स्त्रीभव से सप्तम नरक में जन्म नहीं हो पाता। इन सब का कारण उस प्रकार के तीव्र संक्लेश आदिक परिणामों की योग्यता नहीं है ऐसा समझना चाहिये, या अधिक पाप करने की उनमें शक्ति नहीं है ऐसा जानना चाहिये। छठे नरक में कोई जीव तो मिथ्यात्व गुणस्थान में ही जन्म लेता है और मिथ्यात्व गुणस्थान में ही मरण करता है। याने मिथ्यात्व से आये और मिथ्यात्व से ही निकले। कुछ जीव मिथ्यात्व गुणस्थान में जन्म लेते हैं और द्वितीय गुणस्थान में मरण कर सकते हैं। कुछ बिरले जीव होते हैं ऐसे जो जन्म तो लें प्रथम गुणस्थान में और मरण करें चतुर्थ गुणस्थान में। सप्तम नरक में उत्पन्न होने वाले नारकियों की अवगाहना ५०० धनुष की होती है। इस नरक में अत्यन्त शीत वेदना है। यदि कोई जीव सप्तम नरक में जन्म न ले याने कोई जीव ७वें नरक में भी उत्पन्न नहीं हो रहा है, यदि ऐसा समय बीते लगातार तो वह ६ महीने तक का समय गुजर सकता है। इसके बाद कोई न कोई जीव नारकी होगा ही। तो यह जन्म का अन्तर ६ माह तक का समझना चाहिये। सप्तम नरक में ऐसे मनुष्य उत्पन्न होते हैं, जिनके वज्रवृषभ नाराच संघनन होता है, वे सप्तम नरक में भी जन्म ले सकते हैं और यदि उनके परिणाम धर्म की ओर लग जायें तो वे उसी भव से मोक्ष भी जा सकते हैं। सप्तम नरक में ऐसे जीव हैं जो मिथ्यात्व गुणस्थान में ही जन्म लें और मिथ्यात्व गुणस्थान में ही मरण करें, सारे ही जीव ऐसे होते हैं। अन्य गुणस्थानों से इनका निकलना नहीं होता; और सप्तम नरक के नारकी मरकर तिर्यञ्च में ही उत्पन्न होते हैं, मनुष्यों में उत्पन्न नहीं हो सकते। यह सब उनकी योग्यता का परिणाम है।

प्रथम नरक और सप्तम नरक में जन्म लेने वालों के भावों की विशुद्धि का विशाल अन्तर—कुछ जीव ऐसे होते हैं जो चौथे गुणस्थान में मरण कर नरक गति में जन्म ले सकते। जिनके क्षायिक सम्यग्दर्शन है उनके क्षायक सम्यक्त्व तो मिटता नहीं और सम्यक्त्व होने से पहले नरक आयु का बंध कर लिया था सो आयु बंध भी बदलता नहीं तो उन जीवों को नरक में तो जाना ही पड़ेगा पर वे जायेंगे पहले नरक में ही, और चतुर्थ गुणस्थान में ही उनका जन्म होगा। ऐसे जीव चतुर्थ गुणस्थान में ही नरक गति से निकलते हैं और मरकर मनुष्य गति को ही प्राप्त

Version 1

http://sahjanandvarnishastra.org/

करते हैं। और मनुष्य गति में भी जीव उत्पन्न होंगे—गर्भज, पर्याप्तक, कर्मभूमिज बनते हैं। सप्तम नरक के नारकी मिथ्यादृष्टि ही रहकर नरक से निकलते हैं और तिर्यञ्च में उत्पन्न होते हैं। सो तिर्यञ्च में पंचेन्द्रिय गर्भज, पर्याप्तक और संख्यात वर्ष की आयु वाले ही होते हैं।

नरकों से निकलकर उत्पन्न हुए तिर्यञ्च व मनुष्यों में योग्यता व अयोग्यता का विवरण— सप्तम नरक से निकल कर जन्म लेने वाले तिर्यञ्चों में इतनी बातें नहीं बन सकती हैं—सुमतिज्ञान, सुश्रुतज्ञान, सुअवधिज्ञान, सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व, संयमासंयम। जब इन ही बातों को उत्पन्न नहीं करता तो संयम को प्राप्त करना तो अपने आप ही निषिद्ध हो सकता है। छठे नरक से निकल कर तिर्यंच या मनुष्य में उत्पन्न होते हैं जीव। ऐसे जीव जो छठे नरक से निकल कर आये हैं उन जीवों में कोई-कोई जीव ऐसे निकल सकते हैं जो सुमतिज्ञान, सुश्रुतज्ञान, सुअवधिज्ञान, सम्यग्दर्शन, सम्यग्मिथ्यात्व और संयमासंयम को प्राप्त कर लेते हैं। ऐसे जीव बिरले ही होते हैं पर ये संयम को उत्पन्न नहीं कर सकते। छठे नरक से निकले हुए जीव जो तिर्यंचों में उत्पन्न हुए वे भी उन ६ बातों प्राप्त कर लेते हैं जो चतुर्थ नरक के जीवों में बताया है और जो पंचम नरक से निकल कर मनुष्य हुए हैं वे भी इन ६ बातों को प्राप्त कर ही लेते, पर ये मनुष्य संयम को भी उत्पन्न कर सकते हैं। चौथे नरक से निकले हुए जीव जो तिर्यंचों में उत्पन्न होते हैं वे कोई मतिश्रुत आदिक ६ बातों को प्राप्त कर लेते हैं सो सभी नहीं, किंतु जो ज्ञानी जीव हैं वे कर पाते हैं और चौथे नरक से निकल कर जो मनुष्य में उत्पन्न हुए हैं वो सुमतिज्ञान, सुश्रुतज्ञान, सुअवधिज्ञान, मनःपर्ययज्ञान, केवलज्ञान, सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व, संयमासंयम और संयम को उत्पन्न कर सकते हैं, तथा चौथे नरक से निकले हुए जीव मनुष्य होकर मोक्ष को भी प्राप्त कर सकते हैं। पर चौथे नरक से निकले हुए मनुष्य इन पदों को प्राप्त नहीं सकते —बलदेव, बासुदेव, चक्रवर्ती और तीर्थंकरपना। इनके उत्पन्न करने का सामर्थ्य चौथे नरक से निकले हुए मनुष्यों में नहीं होता है। बलदेव, वासुदेव तो नरक से निकल कर नहीं होते। ऊपर के तीन नरकों से निकले हुए जीव तिर्यंचों में उत्पन्न होते हैं जो वे कोई २ इन ६ बातों को उत्पन्न कर सकते हैं :— मतिज्ञान, श्रुतज्ञान, अवधिज्ञान, सम्यग्दर्शन, सम्यग्मिथ्यात्व और संयमासंयम, किंतु जो मनुष्यों में उत्पन्न हुए हैं वे कोई कोई मनुष्य मतिज्ञान, श्रुतज्ञान, अवधिज्ञान, मनःपर्ययज्ञान, केवलज्ञान, सम्यग्दर्शन, सम्यग्मिथ्यात्व, संयमासंयम और संयम को उत्पन्न कर सकते हैं। याने मनुष्य ९ पदों को प्राप्त कर सकते हैं पर ये कोई भी बलदेव, वासुदेव, चक्रवर्ती उत्पन्न नहीं होते। यहाँ यह बात समझना कि बलदेव, वासुदेव और चक्रवर्ती ये स्वर्गों से आकर ही उत्पन्न होते हैं। इन तीन नरकों से निकले हुए मनुष्य तीर्थंकरपने को प्राप्त कर सकते हैं। इन नरकों से निकले हुए मनुष्य तो मोक्ष जाने का भी सामर्थ्य रखते हैं। तीर्थंकर मोक्ष जाते ही हैं और अन्य मनुष्य भी मोक्ष जा सकते हैं। यहाँ यह बात ध्यान देने योग्य है कि नारायण, प्रतिनारायण और चक्रवर्ती ये नरक से निकल करनहीं हुआ करते किंतु स्वर्ग से आकर ही होते हैं और स्वर्ग में ये उत्पन्न हुए थे उससे पहले इनका जीवन अच्छा होता है, धर्मात्मा होते हैं, मुनि होते हैं, तपश्चरण करते हैं। और अच्छे ऊँचे-ऊँचे कार्यों के साथ थोड़ा इसका निदान सा हो जाता है, तो उस निदान से स्वर्गों में जाकर फिर भी यहाँ नारायण प्रतिनारायण जैसे पदों को प्राप्त करते हैं, पर तीर्थंकरों को तो बताया है कि वे नरक से भी निकल कर तीर्थंकर होते हैं और तीर्थंकर नियम से मोक्ष जाते ही हैं। तो ऐसे नरकों का जो दुःख है वह मोही जीव के लिए तो संसार बधन बढ़ाने वाला है, पर

Report any errors at vikasnd@gmail.com

http://www.jainkosh.org

जिसके निज सहज चिन्प्रकाश का लाभ है, संसार चक्र से जो निकल जायेगा ऐसे जीवों को वह किसी दृष्टि से लाभ देने वाला है, इसलिए संसार में दुःख सुख की छाँट न करनी चाहिए कि हमको दुःख अथवा सुख मिले। या पुण्यफल और पापफल में छाँट न करना चाहिये कि मुझे पुण्यफल मिले, पापफल मिले, किंतु यह छाँट करना चाहिये कि मेरे पाप भाव कभी मत होवें, धर्मभाव हों, और पुण्यभाव हों तो धर्मभाव से सम्बन्धित हों तो उत्तम है।

जीव के सहायका चिन्तन— इस जीव का शरण सहयोगी अपने आप का विशुद्ध परिणाम ही है। यहाँ कोई किसी की रक्षा कर सकने वाला नहीं है, जो कुटुम्ब में बड़ आराम से बड़ी प्रीति से रहते हैं, परस्पर बहुत सुख भोगते हैं, ऐसे ये सभी जीव भी अगर नरकों में गये और एक ही बिल में उत्पन्न हो गये तो वहाँ जाकर ये प्रीति नहीं निभाते और न कोई किसी दूसरे को कुछ भी बख्श सकता है। यहाँ चाहे कोई पति पत्नी ही क्यों न हों, और बड़े ही प्रेम से क्या न रहते हों, लेकिन वहाँ जाकर वे आपस में एक दूसरे की काट मार ही किया करते हैं। यहाँ थोड़े भवों का, थोड़े काल का कुछ सुयोग पाया और उसमें इतना बेसुध हो गये कि अपने आत्मा को कुछ सुध भी न लें तो ऐसे जीवों का कोई मददगार नहीं होता। मददगार तो कोई किसी का भी नहीं होता, मगर पाप करने वाले को फल भोगना पड़ता है और उसमें कोई हाथ नहीं बटा सकता है। यहसब लीला एक प्राकृतिक चल रही है। किसी के बनाने से, करने से नहीं चल रही है, किंतु ऐसा ही निमित्त नैमित्तिक योग है कि जब जीव के कषायभाव जगता है तो उन भावों का निमित्त पाकर स्वयं ही कार्माणवर्गणायें उसके अनुकूल अपने में बंधन उत्पन्न कर लेती हैं और फिर जीव के भावों का निमित्त पाकर कर्मबंधन हुआ सो यह जीव के कलंक के लिए ही बात बनती है और आगे इन कर्मों के उदय में जीव दुःखी होता है।

निगोद जीवों की तुच्छ दशा—इन ७ पृथ्वियों से नीचे थोड़ा स्थान है, वायुमण्डल है, जहां नारकी तो नहीं रहते, पर निगोदिया जीव वहां रहा करते हैं। अन्य जीवों की वहां गति नहीं है इस कारण उस स्थान को नित्य निगोदस्थान कह दिया करते हैं। यहां नित्य के मायने सदा काल निगोद रहता ही है। जो आज निगोद में है वहाँ नित्य निगोद के स्थान पर, उसके लिये यह नियम नहीं है कि वे अनन्त काल तक निगोद ही रहेंगे। और ऐसा भी नहीं है कि जो नित्य निगोद नहीं हैं, इतर-निगोद है वे वहां जन्म न लें पर चूँकि उस स्थान पर त्रस जीव या व्यक्त स्थावर वहाँ नहीं होते इस कारण से इसको नित्य निगोद का स्थान कहा करते हैं। अब लोक रचना में देखिये कि सबसे नीचे तो नित्य निगोद का स्थान है और सबसे ऊपर सिद्ध लोक का स्थान है। और यह भी परख लें कि निगोदिया जीव अनादि काल से निगोद में है किन्तु सिद्ध भगवान ये अनन्त काल तक सिद्ध लोक में रहते हैं। सिद्धलोक में रहने वाले भगवन्तों की ऐसी लीला है कि उनके ज्ञान में तीन लोक और अलोक सभी समाये हुए हैं। अनन्त आनन्द के धनी हैं। तो निगोद जीवों की ऐसी उल्टी लीला है कि वे कैसा अटपट हल्के साधारण शरीर में रह रहे हैं कि अनन्त निगोद जीवों का एक शरीर है, जिनके आधार पर वे सब जीव रहते हैं और उनका एक साथ जन्म होता, मरण होता। ऐसा जन्म मरण करते रहते हैं, उस बीच अन्य और भी निगोदिया जीव वहाँ आते हैं तो आते समय किसी समय से सिलसिला हुआ उनके साथ जन्म-मरण आदिक का, मगर वह सिलसिला सबके साथ एक बन जाता है। तो सबसे पहले नीचे निगोदिया जीव का स्थान है। उसके ऊपर इन नारकियों का स्थान है। यह सब अधोलोक का एक चित्रण है। अब इसमें कोई पूछे कि सबसे

Version 1

http://sahjanandvarnishastra.org/

ज्यादह दुःख निगोदिया जीवों को है या नारकियों को तो उसके उत्तर दोनों प्रकार के हो सकते। नारकी जीवों की वेदना तो स्पष्ट है, ऐसी शीत नरकों में रहती है कि जहाँ बड़े-बड़े ताम्र पर्वत भी जो रसायन बनकर बहने लगते हैं वे भी उस शीत के कारण पत्थर जैसे ठोस (घन) बन जाते हैं। तो जहाँ शीत वेदना भयंकर है, उष्ण वेदना भयंकर है उन नारकी जीवों का दुःख तो सब समझ सकते हैं कि किस प्रकार का उनके दुःख होता है, पर एक इन्द्रिय द्वारा ही उनके दुःखों का अनुमान किया जा सकता है। खुद ज्यादह नहीं समझ पाते इस कारण कि उन जैसी हमारी स्थिति नहीं है। हम नारकी भी नहीं है फिर भी नारकी जीवों के दुःखों का हम झट अनुमान कर सकते हैं। हम भी संज्ञीपञ्चेन्द्रिय जीव हैं, वे भी संज्ञीपञ्चेन्द्रिय हैं इस कारण उनके दुःख का अनुमान हम कर सकते हैं, पर एकेन्द्रिय जीवों का दुःख तो इस तरह है कि जैसे किसी मनुष्य के मुख में और नाक में भी कपड़ा ठूस दिया जाए और फिर उसे किसी बड़ी पेटी के अन्दर बन्द कर दिया जाए तो तो जैसी दम घुटने की दशा उसकी होती है उससे भी तुच्छ दशा निगोदिया जीवों की रहती है।

वर्तमान सुअवसर से लाभ उठाने का अनुरोध—इस प्रसंग में हमें यह समझ लेना चाहिए कि अब हम निगोद भव से तो निकल आये और अच्छे-अच्छे भव पा पाकर आज मनुष्य हो गए हैं तो हमने उस मनुष्य भव में विषय कषायों का प्रसंग, इनकी आसक्ति, दूसरों पर अन्याय ये सारे काम कतई न करना चाहिए, अगर कोई करे, चाहे गुप्त रूप से ही करे तो उसे नरक गति में जाकर जन्म लेना पड़ता है जहाँ सागरों पर्यन्त इस जीव को दुःख भोगना पड़ता है। इसका नाम नरक यों ही तो पड़ गया कि ये अपने दुःखों के द्वारा मनुष्यों को चीख उठा देते हैं। नरों को मनुष्यों को काँय-काँय करा देते हैं, इतनी कठिन वेदना इन नरकों में पायी जाती है जो कि ये ७ प्रकार की भूमियों में रहते हैं। तो यहाँ तक अधोलोक का वर्णन हुआ। ऊर्द्धलोक के नीचे भाग से लेकर मेरू पर्वत की जड़ तक हैं, जहां से जड़ शुरू होती है वह मध्यलोक कहलाने लगता है। यह अधोलोक का वर्णन हम आप सबके लिये वैराग्य के लिये हो और तत्वज्ञान की प्राप्ति की उमंग के लिये हो, ऐसे ही भावों से सूत्रों का पाठ हो तो इस जीव के लिये कल्याण का साधक है।

मोक्षशास्त्र प्रवचन १३ वाँ भाग समाप्त।

Report any errors at vikasnd@gmail.com